प्रसार दूत

कृषि विज्ञान की अग्रणी पत्रिका

दिसम्बर 2018

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानान्तरण केन्द्र
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली–110012

संपादकीय

किसान भाइयो, शीत ऋतु आ चुकी है। इन दिनों नवंबर के अंत में काफी ठंड पड़ने लगी है जबकि दिसंबर और जनवरी माह शेष है। कड़ी ठंड रबी की फसलों के लिए फायदेमंद है, बशर्ते पाला न पड़े। गेहूँ की फसल में अच्छे दाने बनने के लिए कड़ी ठंड आवश्यक होती है। दिल्ली और आसपास के इलाकों में इन दिनों प्रदूषण भी बढ़ जाता है। धूल और धुएँ के कण ठंड में ओस की नमी के साथ जमकर स्मॉग बनाते हैं, जो हवा से भारी होते हैं, इसलिए वायुमंडल में ऊपर नहीं जा पाते और श्वसन के दौरान फेफड़ों में जाते हैं।

वायु प्रदूषण की समस्या इस क्षेत्र में गंभीर स्तर तक पहुँच चुकी है। विशेषकर ठंड मे दिनों में दिल्ली की हवा विषैली हो जाती है, जो सेहत के लिए अत्यंत खतरनाक होती है। हालाँकि इस पर नियंत्रण पाने के लिए सरकारें विभिन्न कदम उठा रही हैं लेकिन इसमें किसान भाइयों के सहयोग की भी आवश्यकता है। दिल्ली एवं आसपास के राज्यों में धान कटाई के बाद अगली फसल हेतु खेत तैयार करने के लिए बची हुई पराली या अपशिष्ट को जलाने की प्रथा है। इससे निकलने वाला धुआँ भी वायु प्रदूषण में उल्लेखनीय योगदान करता है। साथियो, प्रदूषण की समस्या सीधे हमारे स्वास्थ्य से जुड़ी है, और इसका सामना भी हम सभी को मिल–जुलकर करना होगा।

पराली को जलाने के बजाए सुरक्षित प्रबंधन की तकनीकें मौजूद हैं, जिससे आर्थिक लाभ कमाया जा सकता है। यदि इन्हें खेत में मिट्टी में मिलाकर सड़ा दिया जाए, तो इसमें मौजूद कार्बन और पोषक तत्व उर्वरता बढ़ाते हैं। साथ ही, इसका उपयोग कई उद्योगों जैसे कागज, पैकिंग सामग्री बनाने में किया जा सकता है। राज्य सरकारों ने इनके सुरक्षित प्रबंधन के लिए अनेक प्रोत्साहन योजनाएँ भी चलाई हैं, जिनका लाभ किसान भाई उठा सकते हैं। हमें जागरुक होना पड़ेगा कि पराली जलाना न केवल स्वास्थ्य, बल्कि आर्थिक दृष्टि से हानिकारक और गैरकानूनी भी है।

गत दिनों एक चौंकाने वाली खबर आई थी कि कुछ गाँवों ने सरकारी नीतियों के विरोध के संगठित रूप से (जानबूझकर) पराली जलाने का फैसला किया है। अपनी माँग के लिए आवाज उठाना या विरोध प्रकट करना उनका अधिकार है, लेकिन इसके लिए पराली जलाने का तरीका कितना जायज है, इसका फैसला आप स्वयं करें। प्रदूषण के सरकार या नीति निर्माताओं को तो बाद में असर होगा, पहले स्वयं अपना और अपने बच्चों को नुकसान होगा।

आगामी दो तीन माह में कई जगह कृषि मेले और प्रदर्शनियाँ लगने वाली हैं। यह समय कृषि मेलों के लिए अनुकूल होता है। इस समय रबी की फसल खड़ी होती है, और कटाई में कुछ विलंब है और किसान भाई मेलों में भाग लेने के लिए समय निकाल सकते हैं। साथ ही आयोजन संस्थानों में जीवंत प्रदर्शन के लिए फसलें तैयार रहती हैं। पूसा संस्थान का वार्षिक कृषि उन्नति मेला भी इसी दौरान आयोजित होगा, जिसकी तिथि तय होने के बाद आपको सूचित की जाएगी। किसान भाइयों के लिए यह सुनहरा अवसर है कि इन मेलों में आएँ और नई–नई तकनीकों को देखने के लिए उपलब्ध अवसरों का पूरा लाभ उठाएँ।

आज खेती के तौर तरीके आधुनिक हो गए हैं। आज तकनीकी ने ऋतुओं, संसाधनों और बाजारों की सीमाएँ समाप्त कर दी हैं। पहले फल मौसमी होते थे, अर्थात एक फल किसी विशेष मौसम में पाया जाता था। अब वह वर्षभर उपलब्ध

रहता है। सब्जियों के रबी या खरीफ जैसी बाध्यता नहीं रही। ग्रीनहाउस और संरक्षित खेती तकनीकी से अधिकांश सब्जियों की वर्षभर खेती की जा सकती है। सूचना–संचार क्रांति ने विपणन में नए आयाम खोल दिए हैं। गुणवत्तापूर्ण उत्पाद पैदा करना और उसके विपणन के लिए विशिष्ट बाजार की पहचान, दो ऐसे महत्वपूर्ण चरण हैं, जिन्हें अपनाकर कृषि से दुगुनी ही नहीं बल्कि कई गुनी आय प्राप्त की जा सकती है। आजकल प्रिसीजन फार्मिंग अर्थात परिशुद्ध खेती का जमाना है। इसका आशय उस प्रौद्योगिकी से है जिसमें फसल की आवश्यकताओं की सटीक पहचान कर संसाधनों का सटीकतापूर्वक प्रयोग किया जाता है, जिससे उपयोग दक्षता अधिकतम प्राप्त की जाती है। सरकार की ''मोर क्रॉप पर ड्रॉप'' की भी यही अवधारणा है, कि पानी की प्रत्येक बूंद का इस प्रकार इस्तेमाल करें कि उपज में उसका अधिकतम योगदान मिले। इस प्रौद्योगिकी के अंतर्गत प्रत्येक पौधे की निगरानी के लिए अत्याधुनिक सेंसरों, कैमरों, ड्रोन उड़न–मशीनों तथा आंकड़ों के विश्लेषण के लिए कंप्यूटर और डिसीजन सपोर्ट सिस्टम का इस्तेमाल किया जाता है। पोषण एवं अन्य आदानों की सटीक आपूर्ति के लिए स्वचलित संवहन व वितरण प्रणालियों का इस्तेमाल किया जाता है। आजकल बड़ी–बड़ी कंपनियों ने इस दिशा में कार्य करना शुरू कर दिया है कि कृषि में कैसे रोबोटिक्स और स्वचलन प्रणाली का उपयोग बढ़ाया जाए, ताकि उसी दक्षता से फसलें उगाई जाएं, जैसे कारखानों में कपड़े या कारें बनाई जाती हैं।

प्रसार दूत के इस अंक में आगामी ऋतु को ध्यान में रखते हुए समसामयिक आलेखों को शामिल किया गया है, जैसे बाग स्थापना के उपरांत आवश्यक प्रबंधन कार्य, किसान की आय बढाने की एकीकृत सोच, कर्तित पुष्पों में कटाई पश्चात रख–रखाव तथा भण्डारण, आलू के महत्वपूर्ण रोग और उनका प्रबंधन, रबी की मुख्य शाकीय फसलों में एकीकृत कीट प्रबंधन, पपीता उत्पादन में नर्सरी प्रबंधन, शहद के स्वादिष्ट एवं पौष्टिक उत्पाद, गेहूँ की नवीन एवं उन्नत किस्में अपनायें और पायें अधिक उत्पादन और आय, रबी मक्का की खेती के लिए उन्नत सस्य विधियां, कद्दू–वर्गीय सब्जियों की अंतर–रिले फसल उत्पादन प्रौद्योगिकी, प्याज एवं लहसुन के कीट व रोग की रोकथाम, मध्य व पछेती फूलगोभी से अधिक आय के लिए उन्नत शस्य क्रियाए, भारत के बहुतायत लघु किसानों को एकत्रित करने की जरूरत एवं रणनीतियां। यह अंक आपको कैसा लगा, इस बारे में अवश्य बताएँ।

संपादक

दिसम्बर 2018

प्रसार दूत

वर्ष 23 | 2018 | अंक-4

संरक्षक

डॉ. ए.के. सिंह

कार्यवाहक निदेशक

डॉ. जे.पी. शर्मा

संयुक्त निदेशक (प्रसार)

प्रधान सम्पादक

डॉ. जे.पी.एस. डबास

सम्पादक

डॉ. एन.वी कुंभारे

सम्पादक मंडल

डॉ. वाई. वी. सिंह

डॉ. एम. के वर्मा

डॉ. रेणु सिंह

श्री के. एस. यादव

डॉ. हरीश कुमार

श्री आनन्द विजय दुबे

तकनीकी सहयोग

श्री लखीराम मीणा

श्री राजेश कुमार

शुल्क और लेख भेजने एवं पत्रिका मंगाने का पता

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान

नई दिल्ली–110012

फोनः 011–25841039

एग्रीकॉमः 1800118989 (टोल फ्री)

ई–मेंलः incharge_atic@iari.res.in

वेबसाइटः www.iari.res.in

विषय सूची | पृष्ठ संख्या

सम्पादकीय

1. बाग स्थापना के उपरांत आवश्यक प्रबंधन कार्य 1

2. किसान की आय बढाने की एकीकृत सोच 5

3. कर्तित पुष्पों में कटाई पश्चात रख–रखाव तथा भण्डारण 9

4. आलू के महत्वपूर्ण रोग और उनका प्रबंधन 14

5. रबी की मुख्य शाकीय फसलों में एकीकृत कीट प्रबंधन 16

6. पपीता उत्पादन में नर्सरी प्रबंधन 21

7. शहद के स्वादिष्ट एवं पौष्टिक उत्पाद 25

8. गेहूँ की नवीन एवं उन्नत किस्में अपनायें और पायें अधिक उत्पादन और आय 28

9. रबी मक्का की खेती के लिए उन्नत सस्य विधियां 33

10. कद्दू–वर्गीय सब्जियों की अंतर–रिले फसल उत्पादन प्रौद्योगिकी 38

11. प्याज एवं लहसुन के कीट व रोग की रोकथाम 41

12. मध्य व पछेती फूलगोभी से अधिक आय के लिए उन्नत शस्य क्रियाए 46

13. भारत के बहुतायत लघु किसानों को एकत्रित करने की जरूरत एवं रणनीतियां 50

वार्षिक शुल्क ₹ 80/– मनीआर्डर द्वारा

एक प्रति मूल्य ₹ 20/–

बाग स्थापना के उपरांत आवश्यक प्रबंधन कार्य

मधुबाला ठाकरे, महेन्द्र कुमार वर्मा एवं अरविन्द
फल एवं औद्यानिकी प्रौद्योगिकी संभाग
भा.कृ.अनु.प.– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली, 110012.

बाग लगाने के पश्चात् उनका प्रबंधन करना सबसे आवश्यक कार्य होता है। बाग स्थापना के शुरूआत के वर्षों में की गई गलतियाँ भविष्य में फल उत्पादन की गुणवत्ता, मात्रा तथा आय सभी को प्रतिकूल प्रभावित करती है। अतः इस लेख में बागों की स्थापना के उपरान्त सम्बन्धित प्रबंधन को निम्नलिखित बिंदुओ के अंतर्गत समझाया गया है।

कांट–छांट (संधाई) : यह एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण कार्य है। मातृ पौधों पर कभी भी मूलवृंत (रूट स्टॉक) को ना बढ़ने दें। समय समय पर इससे निकले हुए कल्लों को तुरंत हटा देना चाहिए अन्यथा ये बढ़कर मुख्य पौधे की बढवार को रोक देते हैं। मुख्य तने को सीधा रखने के लिए सहारा दें (स्टेकिंग करें)। मुख्य तने से तीन या अधिकतम चार शाखाओं को रखकर शेष को कांट देना चाहिए। संधाई का कार्य फल विशेष पर निर्भर करता है अतः उसका ध्यान रखें। शुरूआती 2 वर्ष में फल न लें एवं उन्हें तोड़ देना चाहिए। ज्यादातर फलों में तीन साल के बाद ही फल लेने की सलाह दी जाती है।

गैप फिलिंग : यदि किसी कारण से बाग के चिन्हित स्थानों से कुछ पौधे मर गए हैं तो शीघ्र ही उनके स्थान पर नया पौधा लगायें। जब भी नर्सरी से पौधे खरीदें तो जरुरत से ज्यादा ही खरीदें, इस बात का ध्यान रखें की पौधों की आवश्यक संख्या से 5–10% अधिक ही खरीदें जिससे की मरे हुए पौधों के स्थान को आसानी से भरा जा सके। यदि बाग में एक से ज्यादा किस्में लगाई गई है तो गैप फिलिंग के समय उसी किस्म का पौधा लगायें अन्यथा बाग के बड़े होने के पश्चात् बाग की आभा प्रभावित होगी। क्योंकि हर किस्म का अपना विशेष आकार होता है। इसके साथ ही शेष कृषि क्रियाएँ करने में आसानी रहती है।

जलनिकास एवं सिंचाई की व्यवस्था : समान्यतयाः फलों के पौधों को मानसून में लगाया जाता है क्योंकि यही सबसे उपयुक्त समय होता है किन्तु इसी समय बाग में जल भराव की समस्या भी होती है। अतः वर्षा उपरांत बाग में एकत्रित जल का निकलना आवश्यक है। इसके लिए यह आवश्यक है की बाग को समतल रखा जाए अर्थात् बीच में गड्ढे इत्यादि नहीं होने चाहिए। जिससे वर्षा का जल स्वंय ही ढलान से निकल सके। नाली पद्धति से सिंचाई की व्यवस्था होने पर सिंचाई की नालियाँ सही स्थिति में होनी चाहिए ताकि पानी को आसानी से निकाला जा सके। इसके अलावा बाग में जब भी सिंचाई की आवश्यकता हो उस समय सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। सिंचाई चाहे टपक विधि से हो या नाली विधि से, एक बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए की हल्की सिंचाई ना की जाये। दूसरे शब्दों में कम अंतराल पर हल्की सिंचाई करने के बजाय, अपेक्षाकृत अधिक समय अंतराल में अधिक पानी से गहरी सिंचाई करें। इसका कारण यह है की फलों के पौधों (लेयरिंग से बने हो या ग्राफ्टिंग से) में हल्की सिंचाई करने से पानी भूमि की ऊपरी सतह तक की सीमित होता है इस कारणवश जड़ें मिट्टी की ऊपरी सतह में ही विकसित हो पाती हैं जिससे ये पौधे जब बड़े होते हैं तो तेज हवा से गिर जाते है। यदि बाग फरवरी–मार्च में लगाया गया है तो ग्रीष्म ऋतु में सिंचाई का और भी ज्यादा ध्यान रखना चाहिए। टपक सिंचाई विधि, सिंचाई के लिए सबसे उपयुक्त मानी जाती है। इस विधि में पानी लगातार बूंद–बूंद द्वारा पौधों की जड़ों तक पहुचता रहता है एवं गहरी जड़ों तक पानी की पहुँच बनी रहती है परिणामस्वरूप पौधों की जड़ों तथा शाखाओं का विकास अच्छी तरह से हो पाता है। पानी की हानि को रोकने के लिए पौधे के चारों तरफ पलवार भी लगाई जा सकती है या पौधे के चारों तरफ गोलाकार रूप में ढैंचा भी लगाया जा सकता है। जिससे ढैंचा जल्दी

बढ़कर पौधों को गर्मी में तेज धूप से बचाता है तथा वर्षा ऋतु आने पर ढ़ैंचा को मिट्टी में मिला देना चाहिए। इस तरह मृदा में कार्बनिक पदार्थ और पोषक तत्व दोनों मिल जाते हैं।

अंतः सस्य क्रियाएँ : बाग की देखभाल में अन्तः सस्य क्रियाओ का बहुत महत्व होता है। बाग में खरपतवारों का प्रबंधन समयनुसार करना चाहिए। क्योंकि इससे ना सिर्फ पौधों की वृद्धि प्रभावित होती है बल्कि इसकी वजह से बहुत सारे कीट–व्याधियों का प्रकोप भी बढ़ जाता है। पौधों के थालों से खरपतवारों को हटाते समय अच्छी से गुड़ाई करना चाहिए। इससे मृदा में हवा का संचरण बना रहता है और जड़ों की वृद्धि में बढवार भी होती है। सिंचाई की नालियों को समय–समय पर ठीक करना चाहिए।

कीट एवं व्याधियों का प्रबंधन : बाग स्थापना के प्रारम्भ के वर्षो में सबसे अधिक समस्या दीमक की होती है। इसकी रोक–थाम के लिए क्लोरोपायरीफास (5 मिली/लीटर पानी की दर से) दवा को सिंचाई के पानी के साथ देना चाहिए। पौधों में जब नए पत्ते आते हैं तब उनका रस चूसने वाले और काटने वाले कीटों का भी प्रकोप बहुत रहता है, इनकी रोकथाम के लिए प्रणालीगत कीटनाशकों का उपयोग करना चाहिए। फफूंदीजनित बीमारियों से बचाव के लिए बेविस्टीन का (0.1–0.2 प्रतिशत; 2 ग्राम/ली. पानी) छिड़काव करना चाहिए।

पोषण प्रबंधन : शुरुआत के वर्षों में फलों के पौधों को आवश्यक पोषण देना अति आवश्यक होता है जिससे वे आने वाले समय में फल देने के लिए तैयार हो सकें। अतः आम में गोबर की खाद तथा फॉस्फेट युक्त उर्वरकों को अक्टूबर तक अवश्य देना चाहिए। नाइट्रोजन एवं पोटाशधारी उर्वरकों की आधी मात्रा अक्टूबर माह में और शेष आधी मात्रा फल तुड़ाई के पश्चात जून–जुलाई माह में देना चाहिए। 250–500 ग्राम बोरेक्स प्रति वृक्ष की दर से प्रयोग करने से फलों की गुणवत्ता में सुधार होता है। नींबू में कार्बनिक खाद की पूरी मात्रा दिसम्बर के अन्त में तथा नाइट्रोजन एवं पोटाश की आधी मात्रा फरवरी–मार्च एवं शेष मात्रा जून–जुलाई के माह में डालनी चाहिए एवं फॉस्फोरस की पूरी मात्रा फरवरी–मार्च में डालनी चाहिए। उदाहरण के तौर पर आम (तालिका 1), अमरुद (तालिका 2) एवं नींबू (तालिका 3) के पोषण प्रबंधन के बारे में विस्तार से बताया गया है।

तालिका 1: आम के पौधों में खाद एवं उर्वरक की आवश्यकता (किग्रा/वृक्ष)

वृक्ष की आयु (वर्ष)	गोबर की खाद	यूरिया	डी. ए. पी.	एस. ओ. पी.
1	10	0.175	0.109	0.167
2	20	0.350	0.218	0.334
3	30	0.525	0.327	0.501
4	40	0.700	0.436	0.668
5	50	0.875	0.545	0.835
6	60	1.05	0.654	1.002
7	70	1.225	0.763	1.167
8	80	1.400	0.872	1.336
9	90	1.575	0.981	1.503
10 वर्ष से अधिक	100	1.750	1.090	1.670

तालिका 2: अमरुद के पौधों में खाद एवं उर्वरक की आवश्यकता (किग्रा/वृक्ष)

वृक्ष की आयु (वर्ष)	जून–जुलाई	अगस्त	अक्टूबर	दिसम्बर–जनवरी
2	163 ग्राम यूरिया 0.7–0.8 % बोरेक्स	0.7–0.8 % बोरेक्स	163 ग्राम यूरिया	20 किग्रा गोबर की खाद + 283 ग्राम डी.ए.पी. + 167 ग्राम एस.ओ.पी.
3	326 ग्राम यूरिया 0.7–0.8 % बोरेक्स	0.7–0.8 % बोरेक्स	326 ग्राम यूरिया	30 किग्रा गोबर की खाद + 566 ग्राम डी.ए.पी. + 334 ग्राम एस.ओ.पी.
4	489 ग्राम यूरिया 0.7–0.8 % बोरेक्स	0.7–0.8 % बोरेक्स	489 ग्राम यूरिया	40 किग्रा गोबर की खाद + 849 ग्राम डी.ए.पी. + 501 ग्राम एस.ओ.पी.
5	652 ग्राम यूरिया 0.7–0.8 % बोरेक्स	0.7–0.8 % बोरेक्स	652 ग्राम यूरिया	50 किग्रा गोबर की खाद + 1132 ग्राम डी.ए.पी. + 668 ग्राम एस.ओ.पी.
6 वर्ष से अधिक	815 ग्राम यूरिया 0.7–0.8 % बोरेक्स	0.7–0.8 % बोरेक्स	815 ग्राम यूरिया	60 किग्रा गोबर की खाद + 1415 ग्राम डी.ए.पी. + 835 ग्राम एस.ओ.पी.

तालिका 3: नींबू के पौधों में खाद एवं उर्वरक की आवश्यकता (किग्रा./वृक्ष)

वृक्ष की आयु (वर्ष)	गोबर की खाद	अमोनियम सल्फेट	सुपर सल्फेट	पोटेशियम सल्फेट
1	20	0.250	0.250	0.250
2	25	0.500	0.500	0.500
3	30	1.000	1.000	1.000
4	40	1.500	1.500	1.500
5	50	2.000	2.000	2.000
5 वर्ष से अधिक	60	2.500	2.500	2.000

पाले से बचाव : प्रारम्भ के कुछ वर्षों में फलों के पौधों जैसे आम, लीची, पपीता इत्यादि का पाले से सुरक्षा करना बहुत आवश्यक है। इसके लिए पॉलिथीन का उपयोग किया जाता है। पौधे के चारों तरह तीन बांस की डंडिया लगायें। इसके पश्चात् पॉलिथीन को इस तरह से बांधे की पॉलिथीन का मुँह पूर्व दिशा की तरफ खुला रहे तथा उन्हें ऊपर रस्सी से बाँध दें एवं नीचे मिट्टी में दबा दें। इस तरह यह ढाँचा तिकोना आकार का होना चाहिए। सर्दियाँ समाप्त होने पर इसे हटा दें। यह प्रक्रिया उन सभी पौधों के साथ करें जो पाले से ज्यादा प्रभावित होते हैं। सर्दी के मौसम में पाले से बचाव हेतु सिंचाई भी कर सकते है।

अंतरासस्यन : फलों के पौधों को दूरी पर लगाने की वजह से प्रारम्भ के तीन–चार वर्षों तक इनमे अंतरासस्यन करके बीच की खाली जगह को उपयोग में लिया जा सकता है और अतिरिक्त आमदनी भी ली जा सकती है। ध्यान सिर्फ इस बात का रखना होता है कि अंतरासस्यन में लगाई गई फसल से फलों के पौधों को किसी भी तरह का नुकसान कम हो। फल वृक्षों के साथ सामान्यतः बरसीम, लुसर्न, लोबिया, मूंगफली, मूंग, कद्दू, टिंडा, प्याज, मटर, गाजर, फूलगोभी इत्यादि को अंतरासस्यन में लगाया जा सकता है। दलहनी फसलों को अंतरासस्यन में लगाने से ये फसलें नाइट्रोजन यौगिकीकरण द्वारा मृदा की उर्वरकता को बढ़ाती हैं। यहाँ महत्त्वपूर्ण बात यह है कि सिंचाई, पोषण प्रबंधन, कीट–व्याधि इत्यादि को फलों तथा अंतरासस्यन में

लगी फसल के लिए अलग–अलग करना चाहिए।

सावधानियां

- ग्राफ्ट यूनियन पर लगी पोलिथीन को समय पर हटा दें।
- जिन स्थानों पर दीमक की अधिक समस्या हो वहां पौधों को सहारा देने के लिए बांस के डंडों के स्थान पर प्लास्टिक के पाइपो का उपयोग करें।
- इसके अलावा बाग के चारो तरफ बाड़ (फेंसिंग) लगाएं।
- वायु रोधक वृक्षों जैसे जंगल जलेबी, सहजन, शीशम इत्यादि लगाना उपयुक्त रहता है।
- स्वयं बाग की देखभाल करें या किसी व्यक्ति को बाग की देखभाल के लिए बाग में रखें। जिससे बाग का प्रबंधन व्यवस्थित तरीके से किया जा सके।

किसान की आय बढाने की एकीकृत सोच

प्रमोद कुमार, सुधीर कुमार एवं अक्षय साखरे
पादप कार्यिकी संभाग
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

हमारा देश कृषि प्रधान देश है। यहां की लगभग 62 प्रतिशत जनसंख्या, जीवनयापन के लिए कृषि पर आधारित है। देश के कुल क्षेत्रफल का करीब 50 प्रतिशत भू–भाग कृषि योग्य है तथा विगत वर्षों में बढ़ती जनसंख्या के कारण लगभग 0.12 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से कृषि योग्य भूमि के क्षेत्र में कमी आयी है। अतः बढ़ती जनसंख्या एवं बढ़ती आवश्यकता के चलते कृषि पर दबाव बढ़ता जा रहा है। जहां एक तरफ किसान की जोत कम होती जा रही है वहीं कृषि संबंधी उत्पाद की मांग भी बढ़ती जा रही है। फल स्वरुप देश में लघु एवं सीमान्त किसानों की संख्या बड़ी तेजी से बढ़ रही है। आज कुल किसानों में से 67 प्रतिशत केवल लघु एवं सीमान्त की श्रेणी में आ गये है। इनके अलावा सिर्फ 1 प्रतिशत किसानों के पास ही 10 हेक्टेयर के बराबर जोत रह गयी है एवं जमीन जोत का आकार अब सिमटकर औसतन 1.15 हेक्टेयर ही रह गया है। देश में कुल खेती योग्य भूमि का 36.79 प्रतिशत ही सिंचित है। अतः आज भी हमारे देश में फसलों के उत्पादन के लिए किसान वर्षा पर निर्भर रहता है। इन सभी कारकों एवं किसान के उत्पाद की खरीद–फरोख्त संबंधी समस्याओं से आज का किसान जूझ रहा है। बढ़ती खेती की लागत, घटती जोत तथा उपज का उपयुक्त मुल्य न मिलने से किसान की स्थिति दिन–प्रतिदिन बिगड़ती जा रही है। जिसके कारण आज का युवा वर्ग खेती से पलायन कर रहा है। वर्तमान स्थिति में किसानों की आय कैसे बढाई जाये, यह प्रश्न आज के परिपेक्ष में एक ज्वलंत प्रश्न बनकर उभरा है। किसानों की आय कैसे बढाई जा सकती है, इसी संदर्भ में हम अपनी सोच की चर्चा इस लेख में कर रहे हैं।

आय कैसे बढाई जायें?

हम सभी जानते हैं कि अधिक लाभ प्राप्त करने के लिए खेती में लागत पर व्यय को कम करके तथा खेती से उत्पन्न आय को बढ़ाकर किसान की आय को बढ़ाया जा सकता है। वर्तमान स्थिति में अक्सर ऐसा देखा जाता है कि किसानों को उनकी फसल उगाने की लागत के बराबर भी पैदावार से दाम प्राप्त नहीं होते हैं जिसके कारण बैंकों से लिए हुए कर्ज को चुकाने की असमर्थता बढ़ती जा रही है जिससे गरीब किसानों की आत्महत्या की घटनाएं बढ़ रही है। एकीकृत रूप में निम्न सुझावों से किसानों की आय को बढ़ाया जा सकता है।

1. गुणवत्ता वाले बीजों का चयन : अक्सर यह देखा जाता है किसान भाई स्थानीय प्रजातियों के बीज बुवाई के लिए प्रयोग करते है जिनकी पैदावार गुणवत्ता वाले प्रजातियों से करीब–करीब आधी होती है। अतः गुणवत्ता वाले बीजों के इस्तेमाल से पैदावार को बढ़ाया जा सकता है।

2. बुवाई से पहले मृदा परीक्षण : बुवाई से पहले मृदा का परीक्षण कराना अति आवश्यक है तथा खेत में उन्हीं उर्वरकों का प्रयोग करने की आवश्यकता होती है जो मृदा परीक्षण द्वारा दर्शाए जाते है। इसके अलावा उनकी कितनी मात्रा डालनी है इसका भी अवलोकन मृदा परीक्षण द्वारा किया जा सकता है। ऐसा करने से उर्वरक की लागत में भी कमी आयेगी तथा पैदावार भी भरपूर होगी। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए सरकार ने किसानों के लिए *मृदा स्वास्थ्य कार्ड* का आह्वान किया गया है।

3. सिंचाई की उचित व्यवस्था : अच्छे उत्पादन के लिए पानी एक महत्वपूर्ण कारक है। उदाहरण के लिए गेहूं की वर्षा आधारित एवं सिंचित फसल का आंकलन करें तो सिंचित क्षेत्र में उपज, वर्षा आधारित क्षेत्रों से अधिक होती है। अतः सिंचाई का प्रबंधन करना अति आवश्यक है। इस क्षेत्र में भारत सरकार भी सिंचित क्षेत्र को बढ़ाने के लिए

भिन्न–भिन्न प्रकार के प्रयास कर रही है। किसानों को भी उचित व्यवस्था के लिए नलकूप अथवा पानी का संग्रह इत्यादि करके अपने खेत में पानी की व्यवस्था का प्रबंध करना चाहिए। पानी की उपयोग दक्षता बढ़ाने के लिए बूंद–बूंद सिंचाई एवं फुव्वारा विधि (स्प्रिंकलर) से सिंचाई का प्रबंध करना चाहिए। भारत सरकार ने (मोर क्रोप्स पर ड्रोप) का नारा दिया है। उचित मात्रा में तथा उचित समय पर पानी की उपलब्धता से फसल की पैदावार बढ़ती है और लागत भी कम आती है।

4. मृदा में कार्बन की मात्रा बढ़ाये : बुवाई से पहले कम्पोस्ट खाद की अनुमोदित मात्रा डाले। हमारे देश की मृदाओं में अक्सर देखा गया है कि कार्बन की मात्रा 1 प्रतिशत से भी कम है जो कम उपज के लिए जिम्मेदार है। अतः उसकी पूर्ति करने के लिए कम्पोस्ट खाद का डालना अति आवश्यक है। इससे जल उपयोग दक्षता एवं पोषक तत्व दक्षता बढ़ती है तथा फसल पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। हमारे पड़ोसी देश चीन की मृदा में कार्बन की उपलब्धता भरपूर होने से वहां पर फसलों की पैदावार अधिक होती है।

5. खेती के यांत्रिकरण : खेती में यांत्रिकरण करने से लागत का खर्च कम हो जाता है तथा उत्पादन बढ़ जाता है। आज के परिपेक्ष में जोत छोटी होने के कारण छोटे यंत्रों की आवश्यकता होती है। खेत की जुताई तथा बुवाई से कटाई तक, हर स्तर पर यांत्रिकरण लागत को कम करने में विशेष भूमिका निभाता है।

6. अनुमोदित सस्य क्रियाएं : स्वस्थ फसलों को उगाने के लिए अनुमोदित सस्य क्रियाओं का प्रयोग करें। स्वस्थ फसल एवं भरपूर पैदावार के लिए किसान भाइयों को चाहिए कि बुवाई से लेकर कटाई तक अनुमोदित सस्य पैकेज एवं प्रैक्टिस का प्रयोग करें। उदाहरण के लिए फसलों की बुवाई का उचित समय, फसलों के बोने की उचित विधि, खरपतवार प्रबंधन, कीट प्रबंधन तथा सिंचाई प्रबंधन आदि।

7. लेजर लेवलिंग : हमारे खेत खलियानों की धरती समतलीय नहीं है जिसके कारण सस्य संबंधित प्रबंध कार्यों में अनेक कठिनाई आती हैं। लेजर लेवलर द्वारा खेतों को समतल किया जा सकता है। खेत के समतल होने पर पानी, खाद इत्यादि लागतों में विशेष कमी होती है। साथ ही साथ फसल भी भरपूर होती है।

8. चकबंदी : देश को आजाद हुए करीब 70 वर्ष हो गये है और तब से करीब किसानों की चौथी पीढ़ी खेती–बाड़ी को देख रही है। इसके उपरांत भी अभी तक अनेक क्षेत्रों में चकबंदी नहीं आयी है। जिसके कारण किसानों के छोटे–छोटे खेत बिखरे हुए हैं। इसके कारणवश लागत में अत्यधिक खर्च होता है। इसका सीधा असर खेती की पैदावार एवं आय पर पड़ता है।

9. खेती में विविधीकरण : वर्तमान समय में केवल फसल से जीवनयापन करना लाभकारी नहीं है। अतः समयानुसार अब खेती में विविधीकरण की अत्यन्त आवश्यकता है। विविधीकरण से ना केवल किसानों के जोखिम कवर होते हैं अपित उनकी आय भी बढ़ती है। साथ ही साथ विविधीकरण करने से फसलों की पैदावार भी बढ़ती है। उदाहरणार्थ–

- **दुग्ध उत्पादन** : खेती में फसलों के साथ दुधारू पशुओं का समावेश अत्यन्त आवश्यक है। दुधारू पशुओं के दुग्ध एवं दुग्ध संबंधी उत्पाद से किसानों की आय बढ़ती है। साथ ही साथ दुधारू पशुओं से प्राप्त गोबर, मलमूत्र से कम्पोस्ट बनाकर फसलों की पैदावार बढ़ायी जा सकती है। इसके साथ आजकल उन्नत नस्ल के पशुओं के सीमेन की बिक्री भी एक नये आय के स्रोत के रूप में उभर रही है।

- **मधुमक्खी पालन** : खेती में मधुमक्खी पालन करना सरल है तथा कम लागत के साथ शुरू किया जा सकता है। खेतों में मधुमक्खियों के डब्बे रखे जा सकते हैं इससे किसान की आय बढ़ेगी तथा साथ ही साथ मक्खियों द्वारा अनेक फसलों में परागण की क्रिया में तेजी आयेगी। जिससे फसलों की पैदावार बढ़ाने में भी मदद मिलेगी।

- **मशरूम की खेती** : गेहूं एवं धान आदि से प्राप्त भूसे पर मशरूम की खेती आय का एक नया स्रोत है सामान्य तापमान एवं आर्द्र मौसम में अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए कई उन्नत किस्में उपलब्ध है जो

किसानों को वर्तमान समय में अतिरिक्त लाभ कमाने में सहायक हैं।

- **मुर्गी पालन** : मुगी पालन किसानों के बिना लागत के आय बढ़ाने का एक उत्तम स्रोत है। मुर्गी पालन में खेती से प्राप्त विभिन्न उप–उत्पादों की सहायता से बिना किसी अतिरिक्त व्यय के लाभ कमाया जा सकता है।

- **मछली पालन** : खेती में विविधीकरण के दौर में मछली पालन एक प्रमुख स्तम्भ है। वर्ष भर मछली उत्पादन से ना केवल भोजन की आवश्यकता पूरी होती है बल्कि बाजार में मछली को बेचकर अतिरिक्त आय अर्जित की जा सकती है। देश के कुछ भागों में जहां अच्छी बारिश होती है वहां धान के खेतों में भी मछली पालन किया जाता है।

- **सूअर पालन** : खेती में विभिन्न प्रकार के उत्पाद प्राप्त होते हैं। सूअर पालन के लिए खेती से प्राप्त विभिन्न उप–उत्पादों का इस्तेमाल करके अतिरिक्त लाभ कमाया जा सकता है।

- **बत्तख पालन**– बदलते परिवेश में खेती में बतख पालन का समायोजन एक लाभकारी उपक्रम है। ये बिना किसी लागत के काफी अतिरिक्त आय उत्पन्न करने में मददगार होती है।

- **बागवानी एवं खाद्य प्रसंस्करण** : खेती में फलों एवं सब्जियों का अत्यन्त महत्व है। अच्छे फलों एवं सब्जियों के उत्पादन से आय काफी वृद्धि होती है। इसके साथ साथ पुष्पों की खेती आजकल बड़े पैमाने में मुद्रा इकट्ठा करने में कारगर साबित हुए है। पुष्पों की देश के प्रमुख बाजारों में मांग लगातार बढ़ती जा रही है। बागवानी को खेती के विविधीकरण में शामिल करके किसान एक अतिरिक्त आय स्रोत अपने जीवन में जोड़ सकते हैं। फलों एवं सब्जियों से मूल्यवर्धित उत्पाद जैसे अचार, मुरब्बा आदि से, जिनकी बाजारों में काफी मांग का इस्तेमाल अतिरिक्त आय प्राप्त करने के लिए कर सकते हैं।

- **हाइड्रोपोनिक्स (मृदा रहित खेती)** : आजकल खेती की जोत कम रही है अतः हाइड्रोपोनिक्स स्वच्छ एवं शुद्ध माध्यम के रूप में उभर रहा है। इस विधि से सब्जियां उगायी जाती हैं जिनका बाजारों में अच्छा मूल्य प्राप्त होता है। इसके साथ–साथ ऐरोपोनिक्स भी एक अच्छी विधि साबित हो रही है जो लाभ कमाने का एक अतिरिक्त स्रोत उभर रहा है।

- **संरक्षित खेती** : आज के परिवेष में संरक्षति खेती अधिक लाभ प्राप्त करने के लिए महत्वपूर्ण स्रोत है। इससे किसी भी फसल की वृद्धि विकास एवं पैदावार को बढ़ाया जा सकता है। इससे थोड़े से क्षेत्र में फसलों को उगाकर अधिक उत्पादन किया जा सकता है क्योंकि इसमें वातावरण के कारक रोशनी, तापमान तथा आर्द्रता को नियंत्रित किया जाता है। इससे बेमौसमी सब्जियों को उगाकर बाजार में उच्च दामों पर बिक्री करके लाभ कमाया जा सकता है। संरक्षित खेती का पहाड़ों में भरपूर इस्तेमाल हो रहा है।

- **बीज उत्पादन** : अच्छे एवं शुद्ध बीज की आवश्यकता बाजार में हमेशा रहती है। अनुसंधान केन्द्रों से सम्पर्क करके संकर बीज उत्पादन की विधि अपनाकर अपनी आय बढ़ा सकते हैं।

- **आर्गेनिक खेती** : आर्गेनिक खेती के उत्पादों की मांग दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। बदलते परिवेश में कीटनाशकों के फसलों में इस्तेमाल के कारण स्वास्थ संबंधी समस्याओं के चलते आर्गेनिक उत्पाद की बाजार में भारी मांग तथा दाम भी अच्छे मिलते हैं। अतः किसान आर्गेनिक रूप से गेहूं, चावल एवं सब्जियां उगाकर अच्छा लाभ कमा सकते हैं।

- **पादप हार्मोन्स एवं पोषक तत्वों का इस्तेमाल** : अक्सर देखा गया है कि बीज रहित फलों एवं सब्जियों की बाजार में काफी मांग है अतः हार्मोन का इस्तेमाल करके बीज रहित फलों एवं सब्जियों का उत्पाद किया जा सकता है। इसके साथ विभिन्न पोषक तत्वों एवं हार्मोन्स का इस्तेमाल करके उत्पादों का उत्पादन एवं गुणवत्ता बढ़ाई जा सकती है जो अतिरिक्त आय प्राप्त करने में सहायक होती है।

- **भण्डारण** : किसानों के खेतों से उपजे उत्पादों का भंडारण एक प्रमुख ज्वलंत विषय है। उचित भंडारण न होने से न केवल बाजार में दाम कम मिलते हैं बल्कि विभिन्न भंडारण में उत्पाद की भी हानि होती है। वैसे इस विषय में सरकार काफी सकारात्मक कदम उठा रही है लेकिन अभी भी इस क्षेत्र में काफी कार्य किया जाना आवश्यक है।

- **प्रसार–प्रचार** : यह अक्सर देखने में आया है कि अनुसंधान केन्द्र द्वारा विभिन्न तकनीकियां अभी तक भी किसानों तक नहीं पहुंच रही हैं। सस्य से जुड़ी जानकारियों रोग, कीट आदि का पूर्ण रूप से ज्ञान ना होने से उत्पादन में कमी आती है। ऐसी जानकारियां उनके लिए अति हितकारी हो सकती है। सरकार की योजनाओं की जानकारी भी उन तक नहीं पहुंच पाती। अतः प्रचार–प्रसार विभाग की सक्रियता होना अति आवश्यक है।

- **विपणन (मार्केटिंग)** : आज के परिवेश में कृषि जनित उत्पादों के लिए विपणन सबसे विकट समस्या है जिसके कारण किसानों की स्थिति दिन प्रतिदिन गिरती जा रही है। सभी मूल्य ना मिलने के कारण किसानों की आत्महत्या की घटनाएं दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। खेती में लागत लगातार बढ़ती जा रही है तथा पैदावार भी बढ़ती जा रही है लेकिन उत्पाद का उचित मूल्य ना मिलना किसानों के लिए गंभीर समस्या है। कई बार उनकी लागत के बराबर उत्पाद से आय प्राप्त नहीं होती।

सरकार द्वारा फसलों के उत्पादों का न्यूनतम तथा अधिकतम मूल्य तय करना चाहिए क्योंकि फसल आवक के समय जमाखोर न्यूनतम मूल्य पर उत्पाद खरीद लेते हैं लेकिन फसल आवक बन्द होने पर उच्च दामों पर उसी उत्पाद को बेचते हैं। अतः इससे जमाखोरी रूकेगी एवं किसान को उचित मूल्य मिलेगा। इसी संदर्भ में डा. स्वामीनाथन जी ने एक रिपोर्ट प्रस्तुत की थी जिसके अनुसार किसान को उसके उत्पाद का उचित मूल्य मिलना चाहिए। सरकार इस रिपोर्ट को लागू करके किसानों का लाभान्वित कर सकती है।

बिचौलियों के कारण किसान की फसल का उचित दाम नहीं मिल पाता। अतः इस क्षेत्र में सरकार को सीधे किसानों से उत्पाद खरीदने के लिए कदम उठाने चाहिए। किसानों को भी आपस में मिलकर कोपरेटिव समूह बनाकर अपने उत्पाद को सीधे उपभोक्ता तक पहुंचाने के लिए प्रयास करना चाहिए। इससे किसान एवं उपभोक्ता दोनों लाभांवित होगें।

उपसंहार

जैसा कि हम सभी जानते है कि हमारा देश कृषि पर आधारित है। किसान हमारे देश की मेरूदण्ड़ है। अतः किसानों की वर्तमान स्थिति को सुधारने के लिए तथा उनकी आय को बढाने के लिए हम एकीकृत कृषि प्रणाली के विभिन्न अन्य आयामों को भी शामिल करने से ना केवल उसकी आय में बढ़ोत्तरी होगी बल्कि खेती में आने वाली लागत को भी कम करने में मदद मिलेगी। हमारे देश की सरकार को भी चाहिए इस दिशा में अच्छी नीतियों का निर्माण करें जिससे हमारे देश का अन्नदाता आत्महत्या जैसे कठोर कदम की तरफ अग्रसर ना हो तथा देश की उन्नति में अपना अमुल्य योगदान प्रदान करें।

कर्तित पुष्पों में कटाई पश्चात रख–रखाव तथा भण्डारण

बबीता सिंह, एस.एस. सिंधु एवं ऋतु जैन

पुष्प विज्ञान एवं भूदृश्य निर्माण संभाग

भा.कृ.अनु.प.– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

कटाई उपरांत पुष्पोत्पादन में होने वाले मात्रात्मक व गुणात्मक हानि से व्यापार मे कमी आती है। इस कमी को कटाई उपरांत होने वाले प्रबंधन प्रणाली से रोक सकते हैं। कटाई उपरांत उचित प्रबंधन प्रणाली न सिर्फ हमें अच्छी गुणवत्ता वाले फूल देती है, बल्कि जिस समय बाजार में फूलों की बहुतायत हो, उस समय भंडारण का एक अच्छा विकल्प भी प्रदान करती है। फूलों की कटाई उपरांत भी जीवन क्रियाएं होती रहती है, जिसे हम अच्छी प्रबंधन प्रणाली से बचाये रख सकते हैं। कटाई उपरांत क्षति का प्रकार और विस्तार फूलों की किस्म एवं उसके प्रकार पर निर्भर करती है। ऐसी क्षति से बचाव उस समय अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है जबकि फूलों का निर्यात विदेशों या दूरस्थ फूल मण्डियों में करना होता है, इसलिए कटाई उपरांत फूलों के प्राकृतिक रूप को बनाए रखने के लिए विशिष्ट प्रबंधन की अत्यंत आवश्यकता है। इन्हीं आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कर्तित पुष्पों में कटाई पश्चात रख–रखाव तथा भण्डारण कैसे करें, की जानकारी इस लेख में दी जा रही है।

गुलदाउदी

गुलदाउदी एक बहुमुखी फूल है, इसे क्यारियों में, गमलों में उगाया जा सकता है। इसका उपयोग माला बनाने में एवं कर्तिक फूलो के रूप में पुष्प सज्जा में किया जाता है। भारत में बडे फूलो के आकार वाली प्रजातियों का भीतरी सजावट के लिए कर्तिक फूलों के रूप में एवं प्रदर्शनी के लिए उगाया जाता है। जबकि छोटे आकार वाली प्रजातियों को कर्तित फूल, मालाए गजरा, वेणी, पूजा, और गमलों एवं क्यारियों के उद्देश्य से उगाया जाता है।

फूलों की कटाई एवं भण्डारण : रोपाई के 3–4 माह पश्चात गुलदाउदी की फसल मे फूल आने प्रारम्भ हो जाते है जो कि गुलदाउदी की प्रजातियों पर निर्भर करते है। कर्तित फूलों हेतु तने को मृदा से 10 से0मी उपर तक काट देते है। फूलों की उम्र को बढाने के लिए तने का ⅓ हिस्सा पानी में डुबो देते है। फूलों को सुरक्षित रखने के लिए उन्हे प्लास्टिक की थैलियों में रखना चाहिए। फूलों की कटाई का समय प्रजाति, विपणन एवं उद्देश्य पर निर्भर करता है।

ग्रेडिंग, पैकिंग एवं भण्डारण : फूलों का वर्गीकरण (ग्रेडिंग) तने की लम्बाई, फूल के रग एवं फूल के व्यास पर निर्भर करता है। परिपक्व फूलों को पालीथीन मे लपेट कर 6–8 हफ्तों के लिए 0.50 सेल्सियस तापमान पर सूखे स्थान पर रख सकते है। शिथिल फूलो के विपणन के लिए बॉस से बनी टोकरियो या जूट के थैलो में पैक करना चाहिए। एक टोकरी की क्षमता 1–7 किग्रा. जबकि जूट के थैले में 30 किग्रा. शिथिल फूल रखे जा सकते है।

ग्लैडियोलस

ग्लैडियोलस का प्रयोग किनारों, क्यारियों, गमलों व कर्तित पुष्पों के रूप में किया जाता है। इनकी पुष्प डण्डियों का प्रयोग पुष्प सज्जा व गुलदस्ते बनाने में भी किया जाता है।

पुष्प डण्डियों (स्पाइक) को काटना : कन्द रोपने के 75–100 दिन बाद स्पाइक काटने योग्य हो जाते हैं। स्पाइक को सुबह या शाम के समय ही पौधों से काटना चाहिए। सुदूर बाजारों में भेजने के लिए इनको काटने की सही अवस्था तब मानी जाती है जब इन पर नीचे का 1–2 पुष्पक रंग दर्शाने लगे। स्थानीय बाजारों में स्पाइक को बेचने के लिए नीचे का एक या दो पुष्पक थोड़ा अथवा पूर्ण खिलने के बाद ही उन्हें काटना चाहिए। स्पाइक को काटने के तुरन्त बाद किसी बाल्टी आदि में रखते रहना चाहिए।

ग्रेडिंग : फूलों की कटाई के बाद पुष्प डण्डियों को लम्बाई के आधार पर छाँट कर अलग कर लिया जाता है। इनको

मुख्य रूप से निम्न वर्गों में बाँटा गया है–

ग्रेड	स्पाइक	प्रति स्पाइक फूलों की संख्या
फैन्सी	107 से अधिक	16
स्पेशल	96 से 107	15
स्टैण्डड	81 से 96	12
युटिलिटी	81 से कम	10

पैकिंग : ग्रेडिंग के बाद 10–12 स्पाइक का गुच्छा बनाकर उन्हें रबड़बैण्ड के सहायता से बाँध देना चाहिए। 20–24 गुच्छों को क्राफ्ट पेपर, पॉलिथीन, बटर पेपर या वेक्स पेपर द्वारा लपेटना चाहिए ताकि उनको तापमान के उतार–चढ़ाव, झटकों तथा नमी की हानि से बचाया जा सके। इसके बाद इन गुच्छों को 30–35 सेमी. चौड़े व 110–130 सेमी. लंबे आकार के कार्डबोर्ड के डिब्बों, जिनमें जगह–जगह छिद्र बने हों, में पैक करना चाहिए।

भण्डारण : नमी की अवस्था में, स्पाइक को 7–10 दिनों के लिए भण्डारण किया जा सकता है। स्थानीय बाजार में भेजने के लिए स्पाइक को 6^0 सेल्सियस तापमान पर सप्ताह भर के लिए रखा जा सकता है। फूलों की आयु बढ़ाने के लिए इन्हें 300 पी.पी.एम. एल्यूमीनियम सल्फेट 20 प्रतिशत चीनी के घोल में 24 घण्टे के लिए $20–25^0$ सेल्सियस तापमान पर रखना चाहिए।

भण्डारण के समय स्पाइक को हमेशा ऊपर की तरफ खड़ा करके ही रखना चाहिए, क्योंकि उन्हें समानान्तर स्थिति में रखने से उनमें निशेधक गुरूत्वाकर्षण होने लगता है, जिससे उनके ऊपर का भाग एक तरफ को झुक जाता है। फलस्वरूप उनका विपणन मूल्य कम हो जाता है। स्थानीय मंडियों के लिए फूलों को बाल्टियों में भरकर तथा दूर की मंडियों के लिए फूलों का कार्डबोर्ड के डिब्बों में रखकर भेजा जाता है।

जरबेरा

जरबेरा एक बहुत ही महत्वपूर्ण कर्तित फूल है जो कि विश्व के अनेक भागों में उगाया जाता है। इसके अनेक रंगो तथा आकार होने के कारण इसको काफी पसन्द किया जाता है। इसको गमलों में भी उगाया जा सकता है। राष्ट्रीय एंव अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में इसके काले रंग के केन्द्र वाले फूलों की बहुत मांग है। उद्यानों की शोभा बढाने के लिए एकल तथा अर्द्ध डबल तथा कटे हुए फूलों के लिए डबल तरह के फूलों को उगाया जाता है।

तुडाई : जरबेरा में 8–12 हफ्तों के बाद फूल आने शुरू हो जाते हैं। सप्ताह मे दो से तीन बार तुड़ाई की जाती है। फूलों की डण्डी को पकड़कर एक तरफ झुकाकर तथा झटका देकर तोड़ना चाहिए। पूर्ण खिले फूल या जब फूल में पंखुडियों की 2–3 कतारें पूर्ण विकसित हो जायें तो उस समय उनको तोड़ लेना चाहिए।

तुडाई पश्चात फूलों का रख–रखाव : जरबेरा की डण्डी बहुत ही नाजुक होती है जो मुड़ जाती है। मुड़ी हुई पुष्प डण्डी की बाजार मे मांग नही होती है। पुष्प डण्डी की लम्बाई 40 सेमी. से कम नही होनी चाहिए तथा डण्डी सीधी होनी चाहिए। फूल आकार मे समान होने चाहिए तथा उनका आकार 7 सेमी. से कम नही होना चाहिए।

जरबेरा के फूलां को छिद्र किये हुए डिब्बों (बक्सों) मे पैक किया जाता है। इसकी डण्डी को सीधा रखने के लिए इस तरह के बक्से होने से डण्डी को एक स्थान से दूसरे स्थान को भेजते समय बहुत आसानी होती है। घरेलू बाजारों में भेजने के लिए इसको पैकिंग से पहले एकल पुष्प को पालीथीन की चादर मे लपेट देते हैं जिससे रगड़ से होने वाली नुकसान को रोका जा सके।

कारनेशन

ठण्डी एवं हल्की जलवायु में कारनेशन को प्लास्टिक घरों, ग्लासघरों या खुले मैदान में लगाया जा सकता है परन्तु अत्यधिक ठण्डे जलवायु में पौधों का विकास ठीक प्रकार से नहीं हो पाता अतः इनसे उचित विकास तथा उच्च गुणवत्ता वाले फूल प्राप्त करने के लिए इनको ग्लासघरों में उगाना अधिक उपयुक्त एवं लाभदायक होता है। कारनेशन के पुष्पों का उपयोग कर्तित पुष्पों, क्यारियों, गमलों, चट्टानी उद्यानों एवं किनारों के लिए किया जाता है। कारनेशन के फूल विभिन्न रंगों, आकार व आकृतियों में पाये जाते हैं। मुख्य रूप से लाल, पीले, गुलाबी, सफेद, हल्का बैंगनी तथा अन्य बहुत से रंगों के फूल पाये जाते हैं।

फूलों का रखरखाव तथा भण्डारण : फूलों की कटाई के तुरन्त बाद उनको पानी में रखकर ठंडे स्थान पर रखना चाहिए जिससे कि खेत ताप को कम किया जा सके।

कारनेशन के फूल इथाइलिन के प्रति अति संवेदनशील होते हैं। इथाइलिन फूलों की परिपक्वता को बढ़ाता है इसलिए कारनेशन के फूलों को फल व सब्जियों के डिब्बों के साथ परिवहन करना उचित नहीं है।

पल्सिंग : पुष्पों के अधिक दिन तक ताजा रखने के लिए 1 उड सिल्वर थायोसल्फेट के घोल में 24 घण्टे के लिए प्रीकूलिंग किया जाना चाहिए, फिर 4 उड थायोसल्फेट को 15 मिनट के लिए 20–25^0 C तापमान रखना चाहिए। सोडियम थायोसल्फेट का प्रयोग इथाइलीन के उत्पादन में कमी करता है। कापर नाईट्रेट (30–300 मिग्रा./ली) और सुक्रोज (3%) पुष्प परिरक्षक का काम करते हैं। पेन्ट ब्रश अवस्था के पुष्पों को तोड़ने के बाद इथाइलीन अवरोधक घोल से उपचारित करना चाहिए।

भण्डारण : फूलों को पेन्ट ब्रश की अवस्था पर काट कर ऐन्टीइथाइलिन द्वारा उपचारित करके 4 डिग्री सेल्सियस पर प्रशीतकों में दोनो तरह से नमी की अवस्था (पानी में रखकर) तथा सूखी अवस्था (प्लास्टिक में लपेट कर) में रखा जाता है। यदि फूलों को गठी हुई पुष्प कलियों की अवस्था पर तोड़ा जाता है तो उनको अधिक समय तक भण्डारित किया जा सकता है। भण्डारण के पहले कलियों को फॅफूदी नाशक जैसे थाइरम की 0.1 प्रतिशत मात्रा को घोल बनाकर छिड़काव करके उपचारित कर लेना चाहिए।

ग्रेडिंग : कारनेशन के फूलों की ग्रेडिंग तने की लम्बाई, पुष्प की परिपक्वता, खुली कलियों की संख्या और पुष्प व्यास पर निर्भर करता है। सामान्यतः उपयोग में आने वाले वर्ग इस प्रकार है– 40 (40–50 सेमी.), 50 (50–60 सेमी.) तथा 60 (60–70 सेमी.)। ग्रेडिंग के पश्चात् फूलों को गुच्छों में बाँध दिया जाता है। स्टैण्डर्ड कारनेशन को 20 या 10–10 के गुच्छों में बाँधा जाता है जबकि स्प्रे कारनेशन को 5 या 10 फूल प्रति गुच्छे के रूप में तैयार किया जाता है।

पैकिंग : पैकिंग कि लिए विभिन्न आकार के डिब्बों का प्रयोग किया जाता है। स्टैण्डर्ड कारनेशन को ग्रेडिग के अनुसार 24, 28 या 32 के गुच्छों में रखा जा सकता है। अन्तर्राष्ट्रीय मानक के अनुसार स्टैण्डर्ड कारनेशन को 20 पुष्प डण्डियों के गुच्छों में दो सतहों में जिसमे 12 पुष्प डण्डियों उपर की सतह से तथा 6 पुष्प डण्डियों मे नीचे की सतह बना कर रखनी चाहिए। फूलों को बाजार में भेजने लिए 120 X 46 X 25 सेमी. आकार के गत्तों के डिब्बों का प्रयोग किया जाता है, जिसमें स्टैण्डर्ड किस्मों के 600–800 पुष्प तथा स्प्रे किस्मों के 400–500 पुष्प रखे जा सकते हैं।

गुलाब

गुलाब अपनी उपयोगिताओं के कारण सभी पुष्पों के महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यह सबसे पुराना सुगन्धित पुष्प है, जो मनुष्य के द्वारा उगाया जाता था। इसके विभिन्न प्रकार के सुन्दर फूल जो कि आकर्षक, आकृति, विभिन्न आकार, मन को लुभाने वालो रंगों, और अपने विभिन्न उपयोगिताओं के कारण एक महत्वपूर्ण पुष्प माना जाता है। व्यवसायिक रूप से गुलाब को कर्तित रूप मे बहुत ही उपयोग किया जाता है। और विश्व मे इसकी मांग वर्षभर सबसे ज्यादा रहती है। कर्तित फूलों का प्रयोग गुलदस्तों तथा फूलदान के रूप में किया जाता है। गुलाब एक महत्वपूर्ण बहुवर्षीय पौधा है, जो कि बगीचों में विश्व के सभी भागों के उगाया जाता है। इसका कठोर तथा वृद्धि में भिन्नता और कई प्रकार के फूल जो कि बहुत से रंगो मे होने के कारण इसको सबसे ज्यादा उपयुक्त पौधा बनाते हैं। जो कि झाड़ी के रूप में, स्टैण्डर्ड, लताओं, किनारों पर तथा रॉक गार्डन में उपयोग किये जाते है। गुलाब को व्यावसायिक रूप में उपयुक्त पात्रों (गमलों) मे उगाया जाता है। जो कि घरों के अन्दर तथा बाहर दोनों जगह रखा जाता है।

पुष्पों की कटाई

सामन्यतः पौधों को सख्त कलिका की अवस्था मे जब एक या दो पंखुडिया खिलना शुरू होती हैं। अगर फूलों को जल्दी तोड़ लिया जाता है तो कार्बोहाइड्रेट कम होने की वजह से फूल नहीं खिलते हैं। इसके अलावा, पुष्प डण्डी के उपरी भाग की पूर्ण कठोरता न होने की वजह से पेन्डुकल कली के भार को नहीं सह पाता है और डण्डी के उपरी भाग से कली झुक जाती है। इसको 'बेन्ट नेक' कहते है। फूलों की कटाई का सबसे उत्तम समय सुबह 6 बजे अथवा शाम को 4 बजे से 6 बजे तक होता है। सामन्यतः पुष्प डण्डी को जहां से डण्डी निकल रही है उसके पहले पत्ती के उपर से काट लेना चाहिए। तेजधार वाली कैंची से फूलों को काटकर तुरन्त ही पानी से भरी बाल्टी में रख देना चाहिए तथा बाद में पानी के अन्दर ही नीचे से एक

इंच तना और काट दिया जाता है, जिससे पूर्व में तने के अन्दर जो हवा चली गयी थी, उसका स्थान पानी न ले। फूलों को पैक करके यदि ठन्डे कमरे में जिसका तापमान 5–7^0 सेन्टीग्रेड हो, एक या दो घन्टे रखा जाय तो फूलों को सुरक्षित रखने का समय (वेस लाइफ) बढ़ जाता है।

फूलों की ग्रेड़िग : फूलों के रंग अथवा तने की लम्बाई के हिसाब से उनकी छँटाई कर ली जाती है। फूलों को ग्रेडिंग करने से पहले देख लें उनमें निम्न लिखित गुण होने चाहिये –

1. फूलों की डन्डी मजबूत होनी चाहिए।
2. फूलों की पत्तियाँ तथा फूल स्वस्थ होना चाहिए।
3. फूल, डन्डी व पत्तियां बीमारी व कीड़े से मुक्त होने चाहिए तथा उन पर किसी प्रकार का निशान या धब्बा नहीं लगा होना चाहिए।

यदि उपरोक्त गुण है तो फूलों को निम्न ग्रेड में बांट देना चाहिए –

प्रथम ग्रेड	– > 80 सेन्टीमीटर डन्डी की लम्बाई
द्वितीय ग्रेड	– 60–80 सेन्टीमीटर डन्डी की लम्बाई
तृतीय ग्रेड	– 40–60 सेन्टीमीटर डन्डी की लम्बाई
चतुर्थ ग्रेड	– 30–40 सेन्टीमीटर डन्डी की लम्बाई

उपरोक्त भिन्न–भिन्न ग्रेड करने के साथ 12 या 24 फूलों को एक साथ बांधकर पानी में रखकर (स्थानीय बाजार के लिए) या गत्ते के डिब्बों मे पैक कर दूर के बाजार के लिए कोल्ड स्टोरेज में रख देते हैं।

पैकिंग : फूलों की ग्रेडिंग करने के बाद उनके बंडल बना लिए जाते है। 12–24 अथवा आवश्यकतानुसार फूलों के बन्डल बना कर पैकिंग के लिए प्राप्त विशेष प्रकार के कागज में पैक कर रबर बैन्ड लगा दिए जाते हैं। हर बंडल को कार्ड बोर्ड के डिब्बे में रख दिया जाता है, जिससे फूल रास्ते में हिलने–डुलने से खराब नहीं होते। ऐसा करने के पश्चात् फूलों को कोल्ड स्टोरेज में रख देते हैं। डिब्बे का आकार आम तौर पर 100×40×40 सेन्टीमीटर का होता है। फूल डिब्बों में पैक करने के पश्चात् डिब्बों का सुराख खोलकर कोल्ड स्टोरेज में रख दिया जाता है, जिससे डिब्बे के अन्दर और बाहर का तापक्रम बराबर रहे। डिब्बे बाहर निकालते समय सुराख को बंद कर देना चाहिए। पैदावारः– कर्तित फूलों की पैदावार प्रजाति, पौध घनत्व प्रति वर्ग मी., फूलों की गुणवत्ता पुष्प उत्पादन की अवधि, कटाई–छटाई, उर्वरक और समय–समय पर की जाने वाली अन्य सस्य क्रियायों पर निर्भर करती है।

भंडारण : 0 से 2 डिग्री से.ग्रे. तापमान पर कट–पुष्पों का भण्डारण करना चाहिए।

लिलियम

लिलियम कन्दीय वर्ग का महत्वपूर्ण पुष्प है। यह लिलिएसी कुल का सदस्य है। इसके फूल अत्यन्त सुन्दर, आकर्षक, चमकदार तथा विभिन्न रंगों के होते हैं। विभिन्न प्रकार की लिलियों में सबसे अधिक मांग ओरिएन्टल तथा एसियाटिक हाइब्रिड लिलियों की है। अन्य व्यवसायिक पुष्पों की अपेक्षा लिलियों के फूल बाजार में उच्च मूल्य प्राप्त करते हैं। घरेलु पुष्प बाजारों में लिलियों में सबसे अधिक एसियाटिक लिली के पुष्प की खपत होती है। विश्व पुष्प बाजार में इसके फूल का स्थान कर्तित पुष्प सर्वोच्च दस फूलों के श्रेणी में है।

पुष्प डण्डियों की कटाई : कन्द रोपण के 100 से 120 दिनों बाद एसियाटिक हाइब्रिड लिली तथा 120 से 140 दिनों बाद ओरिएन्टल हाइब्रिड लिली के फूल काटने के लिए तैयार हो जाते हैं। जब पहली पुष्प कली में रंग का विकास हो जाए, लेकिन पुष्प कली खिली न हो, ऐसी दशा में एसियाटिक तथा ओरिएन्टल हाइब्रिड लिली की पुष्प डण्डियों को ज़मीन की सतह से लगभग 20–25 सेंमी. छोड़कर सुबह के समय काट देना चाहिए। अगर फूलों को सही अवस्था से पूर्व काट दिया जाए तो कलियॉ पूर्ण रूप से खिल नहीं पाती हैं। पुष्प कलियों को खिलने के बाद काटा जाए तो पुष्प सफर के दौरान या तो टूट जाते हैं या खराब हो जाते हैं। काटने के उपरान्त पुष्प डण्डियों को तुरंत साफ एवं ठण्डे पानी में बाल्टी के अन्दर रखते हैं तथा बाल्टी को किसी कमरे या छायादार स्थान पर 3 से 4 घण्टे के लिए रख देते हैं।

श्रेणीकरण एवं भण्डारण : फूलों को काटने के बाद उन्हें किस बाजार में बेचना है तथा उस बाजार में ग्रेडिंग का आधार क्या है, इस बात को ध्यान में रखते हुए पुष्प डण्डियों का श्रेणीकरण करते हैं। हमारे देश में उगाए जाने वाले एसियाटिक एवं ओरिएन्टल हाइब्रिड लिलियों की

अधिकांश खपत कनाट प्लेस, दिल्ली में स्थित पुष्प बाजार में है। इस बाजार में पुष्प डण्डियों का श्रेणीकरण इस प्रकार है :–

लिलियम	ग्रेड	प्रति पुष्प डण्डी कलियों की संख्या	प्रति बन्च डण्डियॉं की संख्या
एसियाटिक तथा ओरिएन्टल हाइब्रिड लिली	'ए' 'बी' 'सी'	4 या इससे अधिक पुष्प कलियॉं 3 पुष्पकलियॉं 1–2 पुष्पकलियॉं	10 10 10

पुष्प डण्डी की लम्बाई गर्मी एवं सर्दी के मौसम में घटती एवं बढ़ती रहती है। लेकिन दिल्ली पुष्पबाजार में देखा गया है कि सर्दी के मौसम में 'ए' ग्रेड के एसियाटिक एवं ओरिएन्टल हाइब्रिड लिली की पुष्पडण्डी की लम्बाई औसत 70 सेंमी. से अधिक ही रहती है। गर्मी के मौसम में यह लम्बाई औसत 60 सेंमी. के ऊपर रहती है। 'बी' ग्रेड के पुष्पडण्डी की लम्बाई 'ए' ग्रेड की पुष्पडण्डी से थोड़ा ही कम रहता है। लेकिन 'सी' ग्रेड के पुष्पडण्डी की लम्बाई काफी घटती एवं बढ़ती रहती है। औसत 'सी' ग्रेड की पुष्पडण्डी की लम्बाई 35 से 45 सेंमी. के बीच में देखने को मिलती है। पुष्पउत्पादक लिलियम पुष्पडण्डियों को एक सप्ताह के लिए 2–5^0 सेंटीग्रेड तापमान पर भण्डारण कर सकते हैं। विभिन्न प्रकार के खर्च और आर्थिक विश्लेषण के बाद यह पाया गया है कि लिलियम की संरक्षित खेती से प्रति इकाई क्षेत्रफल शुद्ध लाभ बहुत अधिक होता है।

परिवहन : फूलों को लहरदार गत्ते के डिब्बों में मंडी भेजना चाहिए। जो फूल इथिलिन गैसे के प्रति संवेदनशील हैं, उन्हें डिब्बों में इथिलिन स्क्रूबर जिनमें पोटेशियम परमैगनेट नामक रसायन का प्रयोग करना चाहिए। कुछ पुष्प जैसे – ग्लैडियोलस तथा डॉग फलावर की डंडिया लेटा कर रखने पर भूमि की तरफ झुक जाती हैं, उन्हें खड़ी अवस्था में ही मंडी ले जाना चाहिए। कुछ पुष्पीय फसलें जैसे गुलदाउदी, लिलियम, एल्स्ट्रोमेरिया इत्यादि को यदि प्रकाश रहित वाहन में मंडी भेजा जाए तो उनकी पत्तियां पीली पड़ जाती हैं, इसलिए जिस वाहन में इन्हें मंडी भेजा जा रहा हो, उसमें कृत्रिम प्रकाश की व्यवस्था होनी चाहिए। अतः इन्हें ऐसे वाहन में भेजा जाना चाहिए, जिन्हें केवल फूलों की प्रकृति के अनुसार ही तैयार किया गया हो।

सावधानियां

(1) कटाई में काम लेने वाले औजारों को धारदार व साफ–सुथरा रखें। कर्तित औजारों को कम से कम दिन में दो बार जीवाणु मुक्त करें।

(2) अधिक पत्तियों को हटायें। पत्तियों को हवा में अधिक रहने से पानी की वाष्प के रूप में अधिक क्षति होती है। पानी वाली पत्तियों पर अधिक जीवाणु वृद्धि होकर तनों को अवरूद्ध कर देती है।

(3) जिन बाल्टियों के अन्दर पुष्पों को काटना होता है, वह बाल्टियां बाहर और अन्दर से अच्छी तरह से साफ हों। यदि डिर्जेन्ट और 2–4 चम्मच घरेलू अभिरंजित प्रति लीटर पानी के घोल से इन को खंगालें।

(4) तनों को पानी में रखें और आवश्यक कटाई करें, जिस से तनों में वायु के प्रवेश को कम किया जा सके। तनों को दुबारा पानी में लगभग एक इंच तक कटाई करें, जिससे वायु के बुल–बुले और जीवाणुओं को दूर किया जा सके। इस कार्य को विशेष प्रकार के औजार से करते हैं।

(5) दिन के सबसे ठण्डे समय पर फूलों की कटाई करें। जैसे– जल्दी सुबह या देर शाम को तथा फूलों की भरी बाल्टियों को सूर्य के प्रकाश से दूर रखें।

(6) 38 से 43 डिग्री सेल्सियस तापमान का पानी बाल्टियों में प्रयोग करें। यह जल फूलों में ठण्डे पानी की तुलना में जल्दी अवशोषित होता है।

(7) कमरे के तापमान पर जलयोजन घोल में फूलों को 1 से 2 घंटे तक रखते हैं।

(8) ठंडे स्थान पर भंडारण करें। कम तापमान दीर्घ आयु और गुणवत्ता को बनाये रखता है। कर्तित फूलों को 0–3 डिग्री सेल्सियस तापमान पर व 80 से 90 प्रतिशत आर्दता पर रखना सबसे अच्छा होता है। कम तापमान पर उष्णीय कर्तित फूलों को नुकसान होता है, अतः इसे 13 डिग्री सेल्सियस या कमरे के तापमान पर रखते हैं।

आलू के महत्वपूर्ण रोग और उनका प्रबंधन

मलखान सिंह गुर्जर और टी के बैग

पादप रोग विज्ञान संभाग

भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

आलू सबसे महत्वपूर्ण सब्जी फसलों में से एक हैं। आलू की फसल में अनेक प्रकार रोग लगते हैं जिनमें पछेती झुलसा, जीवाणु म्लानि, विषाणु इत्यादि प्रमुख हैं। पत्ती बीमारियाँ, मिट्टी और कंद बीमारियाँ जीवाणु जनित रोग आलू फसल में काफी पैदावार नुकसान का कारण बनते हैं और उनकी तीव्रता क्षेत्र से क्षेत्र में भिन्न–भिन्न होती हैं। वैज्ञानिक हस्तक्षेपों के माध्यम से बीमारियों के कारण एवं फसल के नुकसान में सुधार किया गया हैं। पछेती झुलसा (*फाइटोफ्थोरा इन्फेस्टांस*), अगेती झुलसा (*अल्टेरनारिअ सोलानी*) और जीवाणु म्लानि (*राल्स्टोनिआ सोलनसेरम*) प्रमुख बीमारियां हैं। जिनमें से पछेती झुलसा पौधे विनाशक हैं जो अनुकूल स्थितियों में भारी फसल नुकसान का कारण बनता हैं। यह रोग पहाड़ी क्षेत्रो में बहुत अधिक पाया जाता हैं।

पछेती झुलसा रोग

लक्षणः यह रोग फफूंद के कारण होता हैं। इस रोग के मुख्य लक्षण नीचे की पत्तियों पर भूरे रंग के छोटे–छोटे धब्बों से होता हैं। रोग के धब्बे बिखरे हुए दिखाई देते हैं। जो जल्द ही भूरे रंग के हो जाते हैं यह दब्बे अनियमित आकार के बनते हैं जा अनुकूल मौसम में बड़ी तीव्रता से फैलत हैं और पत्तियों को झुलसा कर नष्ट कर देते हैं। रोग की विशेष पहचान पत्तियों के किनारे और चोटी भाग का भूरा होकर झुलस जाना हैं इस रोग के लक्ष्ण कंदो (seed potato) पर भी दिखाई पड़ता हैं। जिससे उनका विगलन होने लगता हैं।

रोग प्रबंधन

- केवल स्वस्थ बीज का प्रयोग करना चाहिए।
- सिर्फ बिमारी रहित बीज का प्रयोग किया जाना चाहिए।
- बुवाई के पूर्व, खोद कर निकाले गए रोगी कंदो को जलाकर नष्ट कर देना चाहिए।
- पूर्व वर्ष में बचाऐ हुए बीज आलू में से संक्रमित आलू को निकल देना चाहिए।
- लगाने के अवसर पर, संक्रमित कंदों को बाहर निकाल कर के और उनको गाढ़ देना चाहिए हैं।
- रोगी प्रतिरोधी किस्मों का चयन किया जाना चाहिए उदाहरण– कुफ्री मेघा, कुफ्री हिमासोना, कुफ्री हिमालिनि और कुफ्री गिरिधारी इत्यादि।
- कम से कम चार कवकनाशी छिड़काव की सिफारिश की जाती हैं। हालांकि, बीमारी के तीव्रता के आधार पर छिड़काव की संख्या में वृद्धि या कमी की जा सकती हैं। एक रोगनिरोधी उपाय के रूप में, फसल को 75% डब्ल्यूपी (0.2%) जैसे संपर्क कवकनाशी के साथ छिड़का जाना चाहिए, जैसे ही मौसम की स्थिति देर से उग्र होने के लिए अनुकूल हो जाती हैं। बीमारी की उपस्थिति पर, किसी भी दैहिक अथवा सर्वांगीण कवकनाशी जैसे धातुगत–आधारित (0.25%), सिमॉक्सैनिल–आधारित करजैट (3 ग्रा./ली.) या डिमेथोमोर्फ एक्रोबेट आधारित (3 ग्रा./ली.) या फेनामीडोन–आधारित (3 ग्रा./ली.) कवकनाशी लागू किया जाना चाहिए। हालांकि, अगर मौसम अत्यधिक अनुकूल हैं, तो सर्वांगीण कवकनाशी का छिड़काव किया जा सकता हैं।

भूरा विगलन रोग एवं जीवाणु म्लानि रोग

लक्षणः यह जीवाणु (*राल्स्टोनिआ सोलनसेरम*) जनित रोग हैं रोग ग्रसित पौधों सामान्य पौधों से बौन होते हैं जो कुछ ही समय में हरे के हरे ही मुरझा जाते हैं प्रभावित पौधों की जड़ो को काटकर काँच के गिलास में साफ पानी में रखने से जीवाणु रिसाव स्पष्ट देखा जा सकता हैं अगर इन पौधों में कंद बनता हैं तो काटने पर एक भूरी धारी देखी जा सकती हैं म्लानि रोग पैदावार नुकसान का कारण हैं और उत्तर पूर्वी पहाड़ी क्षेत्र में तेजी से फैल रहा हैं।

रोग प्रबंधन

- खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए।
- प्रमाणित बीज का प्रयोग करना चाहिए।
- बुवाई के पूर्व खोद के निकले गए रोगी कंद को जलाकर कर नष्ट देना चाहिए।
- कंदो लगाते समय 10–12 किलो ग्राम प्रति हैंक्टेअर की दर से ब्लीचिंग पाउडर कंद में मिलाये।

विषाणु रोग

जहाँ भी आलू उगाया जाता हैं वहाँ विषाणु बने रहे हैं और आलू के उत्पादन को सीमित करने वाला सबसे महत्वपूर्ण कारण बनता जा रहा हैं। आम तौर पर होने वाले आलू के वायरस और उनके (वैक्टर) होते हैं; पीवीएस (माईजस पर्सिका) पीवीएम (एफिड्स); पीवीवाई (माईजस पर्सिका, अपिस गोस्पीपीः पीवीए (माईजस पर्सिका); आलू के पत्ते रोल वायरस (माईजस पर्सिका, मैक्रोजिफम यूफोरबिया, अपिस गॉसिपि)। वायरस रोगों को अक्सर पत्तियों पर मोजेक पैटर्न, पौधे की स्टंटिंग, पत्ती विकृति, विकृतियों और कंद पर देखा जा सकता हैं।

रोग प्रबंधन

- बीज को एक विश्वसनीय स्रोत से लेना चाहिए।
- आलू के अपघटन से बचने के लिए प्रत्येक 3–4 साल बीज को प्रतिस्थापित करना महत्वपूर्ण हैं।
- बीज तकनीक के अनुसार बीज उत्पादन किया जाना चाहिए। बढ़ते मौसम के दौरान, बीज प्लॉट का निरीक्षण ऑफ–टाइप और रोगग्रस्त पौधों को हटाने के लिए दो बार या तीन बार किया जाना चाहिए जो मोटलिंग, मोजेक, क्रिंकल, नेक्रोसिस और पत्ती रोलिंग लक्षण दिखाते हैं।
- पहला निरीक्षण तब किया जा सकता हैं जब पौधे 10–15 सेमी ऊंचाई प्राप्त करते हैं और दूसरे फूल के चरण में होते हैं। रोग वाहक कीटों के प्रबंधन के लिए डायमेथोएट 1.5 मि.ली./ली. पानी या कान्फीडोर 5 मि.ली./15 ली. पानी में घोलकर स्प्रे करें।

रबी की मुख्य शाकीय फसलों में एकीकृत कीट प्रबंधन

राकेश कुमार शर्मा एवं संजीव रंजन सिन्हा
कीट विज्ञान संभाग
भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110 012

सब्जियाँ हमारे भोजन को संतुलित और पौष्टिक आहार बनाती हैं जो अच्छे स्वास्थ्य और रोगों की रोकथाम के लिए आवश्यक और लाभकारी हैं। सब्जियों में वसा, कैलोरी तथा कोलेस्ट्रॉल कम होता हैं और साथ ही विटामिन ए, बी, सी, ई और के, खनिज पदार्थ, कार्बोहाइड्रेट, फाइबर, फोलिक एसिड और प्रोटीन का यह बेहतरीन स्रोत हैं। इनके अलावा, ज्यादातर सब्जियों में एक घटक "फाईटोकैमिकल्स" होता हैं जो मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यधिक लाभकारी माना जाता हैं।

चीन के बाद भारत सब्जियों का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। भारत में सब्जियों का उत्पादन सन् 2015–16 में 16,90,64,000 मीट्रिक टन था जो कि 1,01,06,000 हेक्टेयर में उगाई गई जबकि सन् 2016–17 में अनुमानित उत्पादन 17,50,08,000 मीट्रिक टन था जो कि 1,02,90,000 हेक्टेयर में उगाई गई थी।

सब्जियों के आपेक्षिक उत्पादन से कम होने का एक प्रमुख कारण कीटों और रोगों द्वारा अधिक क्षति होना है। सब्जियों में कीटनाशकों का उपयोग कम करने के लिए एक व्यापक कीट प्रबंधन एकीकृत कीट प्रबंधन विकसित किया गया। एकीकृत कीट प्रबंधन कृषि में कीट नियंत्रण के लिए एक परिस्थितिकी दृष्टिकोण है और यह कीटों द्वारा क्षति को रोकने या उसमें कमी लाने के लिए एक उपयुक्त पद्धति है।

रबी में उगाई जाने वाली मुख्य सब्जियों में बंद गोभी, फूलगोभी, ब्रोकोली, टमाटर, मिर्च, प्याज़, पालक, मेथी, बथुआ और गाजर आदि हैं।

गोभीवर्गीय सब्जियाँ

बंद गोभी, फूलगोभी, ब्रोकोली आदि मुख्यतः ठंड़े मौसम में उगने वाली गोभीवर्गीय सब्जियां हैं। भारत में बंद गोभी का उत्पादन सन् 2015–16 में 88,06,000 मीट्रिक टन था जो कि 3,94,000 हेक्टेयर में उगाई गई थी जबकि फूलगोभी का उत्पादन सन् 2015–16 में 80,90,000 मीट्रिक टन था जो कि 4,26,000 हेक्टेयर में उगाई गई थी। यह सब्जियां कुछ छाया सहन कर सकती हैं परन्तु विकास के लिए पूर्ण सूर्य की रोशनी बेहतर मानी जाती है। गोभीवर्गीय सब्जियां ठंड में गर्म मौसम की फसलों की तुलना में बेहतर बढ़ती हैं। ये सब्जियां विटामिन ए, सी, ई, के, बी$_1$, बी$_2$, बी$_3$, बी$_5$, बी$_6$ एवं फोलेट, फाइबर, फैटी एसिड, मैंगनीज़, पोटाशियम, फास्फोरस, कैलशियम, मैगनीशियम, लोहा, जस्ता तथा प्रोटीन का एक बेहतरीन स्रोत हैं।

गोभीवर्गीय सब्जियों में सबसे ज्यादा नुकसान चेंपे और डायमंड बैकमाथ द्वारा होता है। यदि विभिन्न कीटों द्वारा क्षति की पहचान कर ली जाए तो इनके नियंत्रण में आसानी होती है। आजकल तम्बाकू की सुण्डी द्वारा भी काफी नुकसान देखा जा रहा है।

चेंपा : इस कीट के पंखहीन हल्के हरे रंग के शिशु व प्रौढ़ गोभी के पत्तों के नीचे मिलते हैं। यह पत्तियों, पुष्पक्रम तथा तनों से रस चूसकर उन्हें नुकसान पहुँचाते हैं। इस वजह से पौधों के स्वास्थ्य एवं उपज कम हो जाती है तथा स्वस्थ फूल के गठन में कठिनाई आती है। इस कीट से निकले मीठे चिपचिपे पदार्थ से पत्तों पर काली फफूंदी लग जाती है जो पौधों को खुराक बनाने में बाधा डालती है।

डायमंड बैकमॉथ (डी. बी. एम.) : इस कीट के पतंगे भूरे रंग के होते हैं। इनके पंखो पर विशिष्ट सफेद धब्बे होते हैं जिसकी वजह से यह हीरे की तरह दिखाई देते हैं। सुंडियाँ पत्तियों की निचली सतह को खाकर हानि करती हैं। पत्तों पर सुंडियों के मल के कारण काले फफूँद की बीमारी लग जाती है। अधिक आक्रमण होने पर सुंडियाँ गोभी के फल

को भी खाने लगती हैं। पत्तों को धीरे से हिलाने पर सुंडी नीचे की तरफ धागे जैसे पदार्थ की सहायता से लटक जाती है, जो इसकी खास पहचान है।

गोभी की तितली वाली सुंडी : यह सुंडी बन्दगोभी में हर जगह पाई जाती है। इसका रंग हल्का–पीला होता है। छोटी सुंडियाँ समूह में रहकर व बड़ी होने पर इधर–उधर फैलकर हानि करती हैं। यह अधिकतर पत्तों को बाहरी किनारों से खाना शुरू करके अंदर की ओर बढ़ती हैं। अधिक आक्रमण होने पर पत्तों की शिराएं ही शेष रह जाती हैं। पत्तों की भोजन बनाने की शक्ति कम होने से पैदावार घट जाती है। यह बन्दगोभी में छेद कर देती हैं और उसे मल से दूषित भी कर देती हैं। इसका आक्रमण फूलगोभी में भी होता है।

तम्बाकू की सुंडी : इस कीट की सुंडियाँ मखमल के समान चिकने व काले रंग की होती हैं। सुंडियाँ रात में पत्तों तथा नई बढ़वार को खाती हैं तथा दिन में मिट्टी या पौधों के नीचे छुपी रहती हैं।

कूबड़ कीट : इसे सेमीलूपर भी कहते हैं। इसकी सुंडियाँ कुछ पीलापन लिए हरे रंग की होती हैं व चलने पर कूबड़ सा आकार बना लेती हैं। सुंडियाँ सर्दियों में कई प्रकार की सब्जियों के पत्तों को खाकर इनमें गोलाकार छेद कर देती हैं। अधिक आक्रमण होने पर सुंडियां पौधों को पत्तीविहीन कर देती हैं।

हलूला – इसे छेदक भी कहते हैं। यह भूरे रंग का होता है तथा प्रारंभिक अवस्था में पत्तियों में छेद करता है व बाद में फल में भी छेद कर देता है। युवा सुंडियाँ पत्तों में सुरंगें बना देती हैं। यह सुरंगें सफेद रंग की होती हैं। यह सुंडियाँ बड़ी होकर पौधे की मुख्य शाखाओं को खत्म कर देती हैं, जिसके कारण पौधे में गोभी का फूल नहीं बन पाता। यह कीट युवा पौधों पर गंभीर असर करता है तथा नर्सरी का मुख्य कीट है।

चित्तेदार बग – इस कीट के शिशु एवं वयक्स पत्ते की कोशिकाओं के रस चूस लेते हैं। प्रभावित पत्तियों पर सफेद धब्बे पड़ जाते हैं। पत्ते मुरझा जाते हैं और युवा पौधे अक्सर पूरी तरह से मर जाते हैं।

रोकथाम

1 खेत की गहरी जुताई करें ताकि कीट और रोग के जीवाणु पक्षियों द्वारा खा लिए जाए अथवा तेज धूप द्वारा नष्ट कर दिए जाए।

2 पौधों के रोपण से पहले जड़ का इमीडाक्लोप्रिड (3 मि.ली./10 ली.) द्वारा उपचार 3–4 घंटों के लिए करें।

3 फसल की बढ़वार की अवस्था में नीम के अर्क (एन.एस. के.ई.) का 5 प्रतिशत घोल का 2–3 बार छिड़काव करने पर कीटों के प्रकोप में कमी आ जाती है। यह छिड़काव दोपहर बाद करना चाहिए।

4 सुंडियों के परजीवी कोटेशिया प्लूटेली का प्रयोग 1000 वयक्स प्रति हेक्टेयर के दर से करने पर कीटनाशकों के प्रयोग में कमी आती है।

5 मित्र कीटों (लेडी बर्ड बीटिल, सिर्फिड आदि) की बढोतरी के लिए मुख्य फसल के चारों तरफ और बीच–बीच में हर 20–25 लाइनों के बाद बरसीम, धनिया, रिजका या मेथी उगाएं, इस कारण चेंपा का प्रभाव कम हो जाता है।

6 रस चूसने वाले कीटों से बचाव के लिए थायामिथोक्साम (2 ग्रा./10ली.) अथवा डाइमैथोएट (1 मि.ली./ली.) का प्रयोग करें।

7 डायमंड बैक मॉथ (डी.बी.एम.) के नियंत्रण के लिए कार्टप (1 ग्रा./ली.) अथवा बी.टी. (1 ग्रा./ली.) से छिड़काव करें।

8 एन. पी. वी. (250 एल. ई/है.) का छिड़काव फूल आने की अवस्था में तम्बाकू की सुंडियों के नियंत्रण के लिए करें।

9 हलूला की रोकथाम के लिए नर्सरी में कार्बोफयुरान का प्रयोग (2 ग्रा./लि.) की दर से करें।

10 उपरोक्त नियंत्रण अपनाने के बाद भी यदि कीटों की मात्रा अधिक हो तो स्पाइनोसैड़ (3 मि.लि./10 लि.) या इमामेक्टिन बेन्जोएट (3 ग्रा./10 ली.) या फिप्रोनिल (2 मि.ली./ली.) या क्लोरेन्ट्रेनिप्रोले (1 मि.ली./10 ली.) का प्रयोग करें।

11 आवश्यकतानुसार कीटनाशी का 10–15 दिनों के अन्तराल पर दोबारा छिड़काव करें।

टमाटर

टमाटर दुनिया की एक प्रमुख फसल है जिसने अपने विशेष पोषक मूल्यों की वजह से लोकप्रियता हासिल की है। यह दुनिया के हर देश में उगाया जाता है। यह एक छोटी अवधि की फसल है जो अधिक उपज के कारण उच्च आर्थिक मूल्य प्रदान करती है। यह अपनी अधिक विटामिन ए अथवा सी की मात्रा के कारण पोषण के क्षेत्र में मूल्यवान है तथा मानव आहार में पोषक तत्व योगदान में पहला स्थान रखता है। उपभोग तथा निर्यात के उद्देश्य से यह संसाधित रूप में बड़े पैमाने पर उगाए जाते हैं। वर्ष 2015–16 में भारत में टमाटर का उत्पादन 1,18,732,000 टन था, जबकि इसी वर्ष चीन में इसका उत्पादन 4,53,65,543 टन हुआ। टमाटर की फसल में मुख्य रूप से फल छेदकों से भारी नुकसान होता है।

चने की सुंडी : यह एक बहुभक्षी कीट है जो टमाटर को भारी नुकसान पहुंचाता है। पौधे में फूल आने से पहले के समय में सुंडी कोमल शाखाओं, पत्तियों तथा फूलों को खाती है, जिसके कारण फसल छिद्रित दिखती है। फल लगने के बाद, सुंडी फल में गोल छेद बनाकर अपने शरीर का आधा भाग अंदर घुसाकर फल का गूदा खाती है जिस कारण फल सड़ जाता है।

तम्बाकू की सुंडी : यह भी एक बहुभक्षी कीट है। इसकी सुंडियाँ चिकनी व काले रंग की होती हैं। यह टमाटर की फसल को काफी नुकसान पहुँचाता है। इसकी सुंडी प्रारंभ में समूह में रहकर पत्तियों की ऊपरी सतह को खुरचकर खाती हैं। पूर्ण विकसित सुंडियाँ पत्तियों को काटकर खाती हैं तथा यह रात के समय में अधिक सक्रिय होती है। इसका अधिक प्रकोप होने पर पौधा पत्तीविहीन हो जाता है।

सफेद मक्खी : इसके वयक्स एवं निम्फ पत्तियों का रस चूस लेते हैं तथा पत्ती मरोड़क मोज़ैक बीमारी फैलाते हैं। छोटे सफेद जीव पत्तियों के नीचे पाए जाते हैं। सफेद मक्खी से ग्रसित पत्तियों में काले फफूंद की बीमारी लग जाती है। सफेद मक्खियों द्वारा उत्सर्जित हनी डिऊ के कारण पत्तियों में काले फफूंद की बीमारी लग जाती है।

लीफ माइनर : इसकी मादा पत्तों की शिराओं में छेद करके उनमें अण्डे देती हैं। यह पत्तियों का हरा पदार्थ खाकर उनमें सुरंगें बनाती हैं।

रोकथाम –

1 एक ही कीटनाशी का प्रयोग बार–बार न करें।

2 रासायनिक कीटनाशकों के छिड़काव से पूर्व फलों को तोड़ लें तथा क्षतिग्रस्त फलों को जमीन में गाड़कर नष्ट कर दें।

3 खेत की गहरी जुताई करने से मिट्टी में मौजूद प्यूपा व सुंडियां पक्षियों द्वारा खा लिए जाते हैं या तेज धूप द्वारा नष्ट हो जाते हैं।

4 पत्ती मरोड़क प्रतिरोधी किस्म उगायें और बीमारी से ग्रसित पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर दें।

5 टमाटर की रोपाई करने के दौरान प्रत्येक 10–15 कतार के बाद गेंदे के पौधों की एक कतार की रोपाई करें। ऐसा करने से चने की सुंडी का नियंत्रण होता है।

6 फल छेदक की निगरानी के लिए पाँच फेरोमोन ट्रैप प्रति हेक्टेयर के दर से लगाएं।

7 रस चूसने वाले कीटों से बचाव के लिए *इमीडाक्लोप्रिड* (2 मि. ली./10 ली.) या थायामिथोक्साम (2 ग्रा./10 ली.) या डाइमैथोएट (2 मि.ली./ली.) का प्रयोग करें।

8 *ट्राइकोग्रामा काइलोनिस* का प्रयोग फल छेदक के नियंत्रण के लिए 50,000 प्रति हेक्टेयर के दर से दो से तीन बार करें।

9 सुंडियों से संबंधित एन.पी.वी. का छिड़काव 250 एल. ई./है. के दर से करें।

10 एक या दो छिड़काव 1 ग्रा./ली. के दर से बी. टी. का 15 दिनों के अंतराल पर करें।

11 आवश्यकता होने पर नोवालूरॉन (1 मि.ली./ली.) या इन्डोक्साकार्ब 14.5 ई.सी. (0.5 मि.ली./ली.) या लैम्डा साइहैलोथ्रिन 5 ई.सी. (5 मि.ली./10 ली.) का छिड़काव करें।

मिर्ची

मिर्च एक ऐसा खाद्य पदार्थ है जो सब्जी, मसाले, औषधीय जड़ी बूटी व सजावटी पौधे के रूप में अरबों

लोगों द्वारा प्रयोग की जाती है। इसका एक घटक के रूप में औद्योगिक उत्पादों में भी प्रयोग किया जाता है। वर्ष 2015–16 में मिर्ची का उत्पादन भारत में 1,87,32,000 टन था।

मिर्ची विटामिन ए, सी तथा फाइबर का एक बहुत अच्छा स्रोत है। मिर्ची में कई रसायनिक घटक होते हैं जो रोगों को रोकने और स्वास्थ्य के गुणों को बढ़ावा देने के लिए जाने जाते हैं। यह कोलेस्ट्राल के स्तर को भी घटाता है। मिर्च का विटामिन सी शरीर को स्कर्वी से तो बचाता ही है साथ रोगों के विरुद्ध प्रतिरोध भी विकसित करता है। इस फसल में मुख्य रूप से माइट और थ्रिप्स या कभी कभी फल छेदकों से भी भारी नुकसान होता है।

माइट : इसका मिर्च पर बहुत अधिक प्रभाव होता है। इसके बच्चे एवं वयक्स दोनों ही हानिकारक हैं जो अपने थूक से पत्तियों पर जाला सा बुनकर हरा पदार्थ खाती रहती हैं। इन जालों में हजारों की संख्या में माइट मिलती हैं। इसके प्रभाव से पत्तियां टेढ़ी भी पड़ जाती हैं और उन पर धब्बे पड़ जाते हैं। फलस्वरूप बहुत हानि होती है।

थ्रिप्स : इनके शिशु एवं वयक्स दोनों ही हानि पहुँचाते हैं। यह पत्तियों के हरे भाग को खरोंच कर खाते हैं, जिससे पत्तियों पर धब्बे पड़ जाते हैं। यह फूल एवं कोमल तनों का रस भी चूसते हैं। फलस्वरूप, पत्तियां, फल एवं कलियाँ सिकुड़ जाती हैं। इसके अधिक प्रभाव से पौधों की बढ़वार रूक जाती है। इनके प्रभाव से विषाणु बीमारियां भी मिर्च में फैलती हैं। थ्रिप्स का प्रभाव ऐसे खेतों में अधिक होता हैं जहाँ खेत सूखे होते हैं। इस कीट का प्रकोप सितम्बर से अक्तूबर तक अधिक रहता है। अधिक आक्रमण होने पर फल बनने की प्रक्रिया में कमी आती है और वह परिपक्व होने से पहले ही झड़ जाते हैं।

चेंपा : यह पंखदार तथा पंखविहीन दोनों ही प्रकार के होते हैं। पूर्ण विकसित चेंपा लगभग 1.75 से 1.90 मि.मी. लम्बा होता है और पंख की फैली अवस्था में 3.25 मि.मी. लम्बा होता है। पंखदार चेंपा में धारियां भी पाई जाती हैं। यह पत्तियों, कोमल तनों से हजारों की संख्या में पाए जाते हैं तथा रस चूसकर पौधे को कमजोर कर देते हैं। कभी–कभी यह पत्तियों के ऊपर भी मिलते हैं।

फल छेदक : इस कीट की सुंडियां फलों के अन्दर घुसकर उन्हें नष्ट कर देती हैं।

रोकथाम

1. थ्रिप्स के नियंत्रण के लिए थायाक्लोप्रिड 21.7 एस.सी. (2 मि.ली./10 ली.) का छिड़काव करें ।
2. चेंपा की रोकथाम थ्रिप्स कीट की तरह करें। इसके अलावा कार्बोसल्फॉन 25 ई.सी. (2 मि.ली./ली.) या डाइमैथोएट (2 मि.ली./ली.) के घोल के छिड़काव से भी अच्छे परिणाम मिले हैं।
3. माइट को प्रोपेगाइट (2 मि.ली./ली.) या स्पाइरोमेसिफेन 22.9 एस.सी. (1 मि.ली./ली.) के छिड़काव से नियंत्रित किया जा सकता है।
4. थ्रिप, माइट और फल छेदक के नियंत्रण के लिए एमामेक्टिन बेंजोएट का छिड़काव 2 ग्रा./10 ली. के दर से करें।
5. फल छेदक के नियंत्रण के लिए स्पाइनोसैड (2 मि. ली./10 ली.) या नोवालूरॉन (1मि.ली./ली.) या क्लोरेन्ट्रेनिप्रोले (1 मि.ली./4 ली.) का छिड़काव करें।

प्याज़

प्याज़ देश में एक निर्यात के लिये बहुत उपयोगी सब्जी है। प्याज में विभिन्न प्रकार के पोषक तत्व होते हैं तथा यह पाचन शक्ति को बढ़ाता है। प्याज़ में विटामिन सी, फोलेट, फाइबर, कैलशियम, लोहा तथा प्रोटीन का एक बेहतरीन स्रोत हैं। वर्ष 2015–16 में प्याज का उत्पादन भारत में 2,09,31,000 टन था। इस फसल में मुख्य रूप से थ्रिप्स से नुकसान होता है।

थ्रिप्स : शिशु एवं वयक्स दोनों ही पत्तियों के हरे भाग को खरोंच कर खाते हैं और रस भी चूसते हैं। प्रभावित पौधों की पत्तियां पौधों के ऊपरी भाग से सूखना प्रारंभ करती हैं और धीरे–धीरे पूरा पौधा सूखकर मर जाता है।

रोकथाम

1. निकाई या गुड़ाई करके खेत को साफ रखें।
2. ग्रसित खेत में पानी भरके थ्रिप्स की संख्या को नियंत्रित किया जा सकता है।
3. थ्रिप के नियंत्रण के लिए डाइमैथोएट (2 मि.ली./ली.)

या लैम्डासाइहैलोथ्रिन 5 ई.सी. (5 मि. ली./10 ली.) का छिड़काव करें।

पत्तीदार सब्जियाँ

रबी की सब्जियाँ जिसमें पालक, मेथी, बथुआ आदि आते हैं ये पोषण की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण होती है। इनमें सभी आवश्यक तत्व जैसे विटामिन ए, सी, के, सोडियम, पोटाशियम, फास्फोरस, मैगनीशियम, कैलशियम, लोहा, जस्ता तथा फाइबर का एक बहुत अच्छा स्रोत है। इस फसल को मुख्य रूप से पालक भृंग और चेंपा से नुकसान होता है।

पालक भृंग : इस कीट के भृंग पत्तियों को छेद करके नुकसान पहुंचाते हैं।

चेंपा : यह शिशु एवं वयक्स कोमल पत्तियों के रस चूसकर पौधे को कमजोर बना देते हैं।

रोकथाम

1 नीम के अर्क (एन.एस.के.ई.) का 5 प्रतिशत घोल का छिड़काव करने पर कीटों के प्रकोप में कमी आ जाती है।

2 चेंपा से बचाव के लिए इमीडाक्लोप्रिड (2 मि.ली./10 ली.) या डाइमैथोएट (2 मि.ली./ली.) का प्रयोग करें।

3 आवश्यकता होने पर स्पाइनोसैड (2 मि.ली./10 ली.) या इन्डोक्साकार्ब 14.5 ई.सी.(0.5 मि. ली./ली.) का छिड़काव करें।

गाजर

गाजर एक जड़दार सब्ज़ी है जो हमारे शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है। गाजर में विटामिन ए (बीटा कैरोटिन), बी$_{6}$, के, फाइबर, कार्बोहाइड्रेट, पोटाशियम तथा प्रोटीन का एक बेहतरीन स्रोत हैं। वर्ष 2015–16 में गाजर का उत्पादन भारत में 13,38,000 मीट्रिक टन था जो कि 82,000 है. में उगाई गईं। इस फसल में मुख्य रूप से गाजर के घुन और जंगमक्खी से नुकसान होता है।

गाजर के घुन (वीविल) : कीट के शिशु उपरी हिस्से में सुरंग बनाकर क्षति पहुंचाते हैं।

जंग मक्खी : इस कीट के मैगट (इल्ली) जड़ों के रेशे (हेयर) खा जाते है और फिर जड़ों मे सुरंग बनाकर उन्हें क्षति पहुंचाते हैं।

रोकथाम

1 फसल का चक्रीकरण करें।

2 क्षतिग्रस्त गाजरों को तुरन्त हटा दें या खेत में अनावश्यक खरपतवार को साफ करें।

3 नीम के अर्क (एन.एस.के.ई.) का 5 प्रतिशत घोल का छिड़काव करने पर गाजर के वयक्स घुन के प्रकोप में कमी आ जाती है।

4 गाजर के घुन से बचाव के लिए इमीडाक्लोप्रिड (2 मि.ली./10 ली.) या डाइमैथोएट (2 मि.ली./ली.) का प्रयोग करें।

5 गाजर के घुन से बचाव के लिए अब दूसरे देशों में लैम्डा साइहैलोथ्रिन 5 ई.सी. (5 मि. ली./10 ली.) या नोवालूरॉन (1 मि.ली./ली.) के छिड़काव की सिफारिश की गई है।

6 जंगमक्खी से सुरक्षा के लिए क्लोरपाइरीफॉस 0.1 प्रतिशत

कीटनाशियों के अंधाधुंध प्रयोग से इनके अवशेष फल, सब्जी, पानी इत्यादि के साथ मनुष्य के शरीर मे पहुँचकर बहुत बुरा प्रभाव डालते हैं। अतः अब कीट नियंत्रण के लिए केवल कीटनाशियों पर निर्भर न रहकर एकीकृत कीट प्रबंधन को प्रयोग में लाने को संस्तुति की जाती है। एकीकृत कीट प्रबंधन में नियंत्रण की वैकल्पित विधियों जैसे सस्य क्रियाओं, भौतिक एवं यांत्रिक विधियाँ, जैव नियंत्रण तथा जैविक कीटनाशी इत्यादि को प्रयोग में लाया जाता है। कीटनाशकों का ज्यादा तथा बार–बार प्रयोग और सुरक्षा की लागत में वृद्धि हो जाती है। एकीकृत कीट प्रबंधन द्वारा दी गई नई प्रोद्योगिकी और कार्यप्रणाली कीटों के खिलाफ बेहतर संरक्षण, फसल की पैदावार में सुधार और किसानों को लाभ प्रदान करती है। एकीकृत कीट प्रबंधन करने से सब्जियों में कीटनाशकों के प्रयोग में कमी लाई जा सकती है।

पपीता उत्पादन में नर्सरी प्रबंधन

कन्हैया सिंह, जय प्रकाश एवं अमित कुमार गोस्वामी

फल एवं औद्यानिकी प्रौद्योगिकी संभाग

भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान सस्थान, नई दिल्ली–110 012

पपीता एक प्रमुख उष्ण एवं उपोष्ण कटिबंधीय फल है। भारत का विश्व के पपीता उत्पादक देशों में प्रथम स्थान है। भारत में पपीता की खेती 1.32 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में होती है तथा उत्पादन 56.57 लाख टन है। आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु, असम, उड़ीसा, बिहार एवं उत्तर प्रदेश प्रमुख उत्पादक राज्य है। इसके औषधीय गुणों एवं आर्थिक रुप से लाभकारी होने के कारण पूर्व के कुछ वर्षों में लोगों ने इसकी खेती की ओर अधिक ध्यान देना शुरु किया जिससे पिछले एक दशक में पपीता के उत्पादन में तीन गुना वृद्धि हुई। किन्तु पपीता को बड़े पैमाने पर उगाने में सबसे बड़ी बाधा अनुवांशिक रुप से शुद्ध गुणवत्तायुक्त रोपण सामग्री का उपलब्ध न होना है। अतः पपीता का शुद्ध बीज ही बुवाई हेतु उपयोग करना चाहिए जो कि किसी शोध संस्थान या प्रमाणित बीज भंडार से क्रय करना चाहिए।

पपीता उत्पादन में पौधशाला का एक महत्वपूर्ण स्थान है किन्तु वैज्ञानिक ढ़ंग से न करने के कारण महंगे बीज पौधशाला में उग जाने के बाद भी गलकर मर जाते हैं, जिससे आर्थिक रूप से बहुत ही क्षति होती है तथा पूरे खेत की रोपाई भी एक साथ तथा समय से नही हो पाती है। अत पपीता की स्वस्थ नर्सरी के द्वारा पौधों की उपलब्धता को बढाया जा सकता है।

पौधशाला के लिए स्थान का चुनाव

- पौधशाला का स्थान आसपास के क्षेत्र से थोड़ा उँचा होना चाहिए तथा जहाँ पर पानी इक्ट्ठा नहीं हो।
- पौधशाला खुली जगह पर होनी चाहिए जहाँ पर सूर्य का प्रकाश पूरे दिन उपलब्ध हो।
- सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो।
- पौधशाला की मिट्टी हल्की दोमट या बलुई, दोमट, तथा पी.एच. मान 7 के आसपास होना चाहिए।

पौधशाला की तैयारी

- पौधशाला की पहले एक गहरी जुताई करें तथा बाद में फावड़े से खुदाई कर के जमीन को समतल कर लें तथा मिट्टी को भुरभुरी बना लें।
- खरपतवार, पौधों की जड़ें तथा कंकड़ पत्थर को बाहर निकाल दें।
- पौधशाला में 2 किग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद या कम्पोस्ट या पत्ती की खाद या 500 ग्राम वर्मी कम्पोस्ट प्रति वर्ग मीटर की दर से मिलाना चाहिए।
- पौध शाला की मिट्टी यदि भारी हो तो प्रति वर्ग मीटर की दर से 3 किग्रा. बालू मिलाना चाहिए।

क्यारियाँ बनाना

पौधशाला में क्यारियाँ दो प्रकार की बनायी जाती हैं प्रथम ऊँची उठी हुई तथा समतल क्यारी। ऊँची उठी हुई क्यारी मुख्यतया वर्षा ऋतु में पौध तैयार करने हेतु बनाई जाती है जिसकी लम्बाई 3–5 मी, चौड़ाई 1 मी0 तथा ऊँचाई 15–20 सेमी. होनी चाहिए एवं दो क्यारियों के बीच में 30 सेमी. की दूरी होनी चाहिए जिससे आसानीपूर्वक क्यारियों में खरपतवार तथा कीटनाशक एवं रोगनाशक दवाओं का उपयोग सुगमतापूर्वक किया जा सके। समतल क्यारी मुख्यतया शरद ऋतु में पौध तैयार करने हेतु बनाई जाती है।

पौधशाला की मिट्टी का उपचार

पौधशाला की मिट्टी के उपचार मुख्यतया निम्न विधियों द्वारा किया जाता है।

- मृदा सौरीकरण (सोलेराइजेशन)
- जैविक विधि

- फार्मलीन द्वारा
- फफूँद नाशक दवाओं द्वारा
- कीट नाशक दवाओं द्वारा

मृदा सौरीकरण

पौधशाला की मिट्टी को सूर्य के प्रकाश में उपचार करने को मृदा सौरीकरण कहते हैं। यह विधि मई–जून में करना चाहिए, जब दिन का तापमान 40–45^0 C हो। सौरीकरण करने के लिए सर्वप्रथम पौधशाला के क्यारी की मिट्टी को पानी द्वारा हल्का गीला कर लेना चाहिए। क्यारी को सफेद पालीथीन से ढ़क कर चारों तरफ मिट्टी से सील कर देना चाहिए। जिससे हवा चलने पर पालीथीन क्यारी के उपर से न उड़ने पाये। क्यारी को ढ़की हुई अवस्था में 40–45 दिनों तक रखना चाहिए। 45 दिनों के बाद पालीथीन को हटा देना चाहिए।

लाभ

रोगकारक फफूदों एवं जीवाणुओं जैसे गलका रोग के कारक फफूंद तथा जीवाणु धब्बा रोग एवं नर्सरी में खरपतवार तथा सूत्रकृमि का नियंत्रण हो जाता है। मिट्टी में फिक्स फास्फोरस, पोटाश एवं अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता में वृद्धि हो जाती है।

जैविक विधि

इसका उपयोग आर्द्रगलन बीमारी से बचाव के लिए किया जाता है। इस विधि में मुख्यतया 3 प्रकार के जीवाण ुओं का उपयोग किया जाता है, जिनमें ट्राईकोडरमा की विभिन्न प्रजातियाँ, *सुडोमोनास फ्लोरोसेन्स* एवं *एसपरजिलस नाईजर* प्रमुख हैं। इस विधि में मृदा उपचार हेतु 10 से 25 ग्राम जैव नियंत्रण प्रति वर्ग मी. क्षेत्रफल एवं बीजोपचार हेतु 6 से 10 ग्राम जैव नियंत्रक प्रति किलोग्राम बीज दर से जैव नियंत्रकों का उपयोग करना चाहिए।

सावधानियाँ

जैव नियंत्रकों द्वारा उपचार के समय पौधशाला में कम्पोस्ट तथा अन्य कार्बनिक खाद पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होने चाहिए। जैव नियंत्रक में जीवित तथा सक्रिय जीवाणु पर्याप्त मात्रा में हों। प्रयोग के उपरान्त पौधशाला में धूप एवं वर्षा से बचाव की व्यवस्था होनी चाहिए। जैव नियंत्रकों द्वारा उपचार के उपरांत पौधशाला में अन्य कवकनाशी एवं जीवाणुनाशी का उपयोग नहीं करना चाहिए तथा पौधशाला में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।

फार्मलीन द्वारा

फार्मलीन का उपचार बीज बुवाई के 15–20 दिन पूर्व करना चाहिए। 1.5 से 2.0 प्रतिशत फार्मलीन घोल की 4.5 लीटर मात्रा प्रति वर्ग मीटर की दर से 15–20 सेमी. की गहराई तक डालें जिससे मिट्टी गीली हो जाय। क्यारी को पालीथीन की चादर से ढक दें। डपचार के 24 घंटे बाद चादर हटा दें तथा चादर हटाने के बाद 15 दिन तक खुला छोड़ दें।

फफूंद नाशक दवाओं द्वारा

मृदा उपचार हेतु कैप्टान या थीरम नामक दवा की 5–6 ग्राम मात्रा प्रति वर्ग मी0 की दर से 15–20 सेमी. की गहराई तक करना चाहिए।

कीट नाशक दवाओं द्वारा

पौधशाला में बीज बुआई से पूर्व क्यारियों को उपचार फ्यूराडान या थिमेट की 3 ग्राम मात्रा प्रति वर्ग मीटर की दर से करना चाहिए।

बीज की मात्रा

डायोसियस प्रजातियों के लिए 300–350 ग्राम तथा गायनोडायोसियस प्रजातियों के लिए 120–200 ग्राम प्रति हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है।

बीजोपचार

बीजोपचार के लिए थिरम या कैप्टान नामक दवा का 2.5–3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से प्रयोग करना चाहिए या 0.02 प्रतिशत घोल में करना चाहिए।

बीज की बुवाई

बीज की बुवाई सामान्यतया कतारों तथा छिटकवाँ विधि द्वारा की जाती है, किन्तु बीज की बुआई कतारों में ही करना चाहिए। इस विधि से बुवाई करने पर खरपतवार

के नियंत्रण तथा रोगनाशक एवं कीटनाशक के छिड़काव में आसानी होती है। इस विधि में कतार से कतार की दूरी 10 सेमी., कतार की गहराई 0.5 सेमी. तथा कतार में बीज से बीज की दूरी 2.0 सेमी. होना चाहिए। बीज के बुवाई के बाद बीजों को स्थानीय स्तर पर उपलब्ध खर, पुवाल या गन्ने के सूखे पत्ते से अच्छी प्रकार ढ़क देना चाहिए। वर्षा से बचाव के लिए क्यारियों को पालीथीन से तथा तेज धूप की अवस्था में हरी जाली द्वारा 2.5–3 फीट की ऊँचाई तक ढ़कना चाहिए।

पौधों को पॉलीथीन के थैलियों में उगाना

पौधों को पॉलीथीन की थैलियों में उगाने हेतु छेद किये गये 150 से 200 गेज वाले पॉलीथीन के थैलों जिनकी लम्बाई 22 सेमी. तथा चौड़ाई 15 सेमी. हो काम में लाया जा सकता है। थैलों को एक तिहाई बालू, एक तिहाई कम्पोस्ट तथा एक तिहाई मिट्टी मिलाकर भर लेना चाहिए। प्रति थैले में 2–3 बीज एक सेमी. की गहराई पर बोने के बाद पानी से सिंचाई कर देना चाहिए। पौधे जमने के बाद उचित देखभाल करनी चाहिए।

पौध तैयार करने का समय

साधारणतया पपीते का बीज नर्सरी में रोपने की निर्धारित तिथि से दो महीने पहले बोना चाहिए। इस प्रकार पौधे मुख्य क्षेत्र में रोपाई के समय करीब 15–20 सेमी. की ऊँचाई के हो जाते हैं। पौधे जून–जुलाई में लगाना चाहिए। जहाँ पानी जमाव की समस्या है तथा वर्षा के दिनों में विषाणु रोग अधिक तेजी से फैलते है वहाँ अगस्त के अंत में या सितम्बर के शुरु में नर्सरी में बीज बोना चाहिए।

क्यारियों से खर या पुवाल हटाना

50 प्रतिशत बीजों के अंकुरण हो जाने पर खर या पुवाल को हटा देना चाहिए।

नर्सरी की तैयारी

पपीता के उत्पादन के लिए नर्सरी में पौधों को लगाने का तरीका व समय बहुत महत्व रखता है। प्रति हेक्टेयर पौधे तैयार करने के लिए बीज की मात्रा उभयलिंगी किस्मों में 100–120 ग्राम व द्विलिंगी किस्मों में 300–350 ग्राम प्रति हेक्टेयर रोपाई के लिए पर्याप्त होती है। उभयलिंगी किस्मों की तुलना में द्विलिंगी किस्मों के पौधे प्रत्येक गड्ढे में एक के जगह दो लगाये जाते हैं। सामान्य रूप से पपीते में एक ग्राम में 50 से 70 की संख्या में बीज आते हैं और इससे 40 से 50 की संख्या में पौध बन सकती है। बीज पूर्णरूप से पका हुआ, अच्छी तरह सूखा हुआ और शीशे की हवा बंद जार या बोतल में रखा हो तथा 6 महीने से ज्यादा पुराना न हो, उपयुक्त है। बोने से पहले बीज को 3 ग्राम केप्टान प्रति किग्रा. की दर से उपचारित करना चाहिए। ट्राइकोडरमा का प्रयोग मृदा जनित रोगों के लिए काफी प्रभावी पाया गया है। इसका प्रयोग नर्सरी के समय करना अधिक प्रभावी रहता है। वह स्थान जहाँ तेज धूप तथा अधिक छाया न रहे नर्सरी के लिए चुनना चाहिए। बीज लगाने के लिए 200 गेज और 20x15 सेमी. आकार की थैलियों जिनमें छिद्र हो की जरूरत होती है। आजकल पपीते की नर्सरी के लिए प्लास्टिक के बने ट्रे का प्रयोग बड़े स्तर पर किया जा रहा है। नर्सरी में 1:1:1:1 के अनुपात में पत्ती की खाद, रेत, गोबर और मिट्टी का मिश्रण बनाकर थैलियों में या प्लास्टिक ट्रे में भर देते हैं। पपीते में अंकुरण प्रतिशत कम होने के कारण प्रत्येक थैली में पपीते के दो बीजों को 1.5 सेमी. गहराई पर बुवाई कर देते हैं। संकर व उभयलिंगी किस्मों के लिए एक बीज पर्याप्त होता है। पर्याप्त तापक्रम होने से बीज बोने के लगभग 15–20 दिन में अंकुरित होने लगते हैं। जब इन पौधों में 4–5 पत्तियां निकल जाएं और ऊंचाई 20–25 सेमी. हो जाए। तब यह खेत में रोपाई करने योग्य हो जाते हैं। रोपाई से पहले थैलियों में लगे पौधों को धूप में रखना चाहिए, ज्यादा सिंचाई करने से जड़ सड़न वाला रोग लग जाता है। उत्तरी भारत में नर्सरी में बीज फरवरी–मार्च (पॉली हाउस में) तथा जून से अगस्त में नेट हाउस में बोने उगाने चाहिए।जिससे विषाणु जनित रोग वाहक कीटों का प्रकोप नही होता है। प्रतिरोपण करते समय थैली के नीचे का भाग एक किनारे से काट देना चाहिए।

सिंचाई

प्रारम्भ के 5–6 दिनों तक क्यारियों को फुआरा द्वारा हल्की सिंचाई करना चाहिए। वर्षा ऋतु के समय जब बारिश हो रही हो तो सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती

है। पौध उखाड़ने के 4–5 दिन पूर्व सिंचाई बंद कर दें तथा पौधे रोपाई के पूर्व हल्की सिंचाई कर दें जिससे पौध आसानी से उखड़ सके।

खरपतवार नियंत्रण

क्यारियों से समय–समय पर खरपतवार को निकालते रहना चाहिए। खरपतवार नियंत्रण हेतु खरपतवारनाशी पेन्डीमीथेलीन (स्टाम्प) 3 मि.ली. दवा प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

आवश्यकता से अधिक घने पौधों को निकालना

क्यारी में 1.0–2.0 सेमी. की दूरी पर पौधे छोड़कर अधिक घने पौधों को हटा देना चाहिए। अधिक घना होने की स्थिति में पौधों का तना पतला तथा कमजोर हो जाता है एवं गलका रोग लगने की सम्भावना अधिक रहती है। उचित दूरी रहने पर सूर्य का प्रकाश, पोषक तत्व व हवा अच्छी प्रकार मिलती है जिससे पौध की बढ़वार अच्छी प्रकार होती है तथा पौध भी स्वस्थ तैयार होते हैं।

पौध सुरक्षा

1. आर्द्रगलन रोगः यह बीमारी पौधशाला में *पीथियम एफेनिडरमेटम* नामक कवक के कारण होती है। इसका प्रभाव नये अंकुरित पौधों पर होता है तथा पौधे का तना जमीन के पास से सड़ जाता है और पौधा मुरझाकर गिर जाता है। अतः इससे बचाव के लिए नर्सरी की मिट्टी को बोने से पहले फारमेल्डिहाइड के 2.5 प्रतिशत घोल से उपचारित कर पालिथीन से 48 घंटों के लिए ढक देना चाहिए तथा बीज को थायरम (2 ग्रा0 प्रति किग्रा0 बीज) नामक दवाओं से उपचारित कर बोना चाहिए। पौधशाला में इस रोग से बचाव के लिए रिडोमिल (मेटालाक्सिल) या मैंकोजेब (2 ग्रा0 प्रति लीटर पानी में) का छिड़काव एक सप्ताह के अन्तराल पर 3–4 बार करना चाहिए।

2. **पर्ण कुंचन रोग** : यह पपीते का एक गंभीर विषाणु रोग है। इस रोग के कारण शुरू में पौधों का विकास रूक जाता है और पत्तियॉ गुच्छानुमा हो जाती है तथा पत्तियों का आकार छोटा हो जाता है। पत्तियों का उपरी सिरा अन्दर की ओर मुड़ जाता है। प्रभावित पौधों में फूल नहीं लगते है।

रोपण पूर्व पौधों का उपचार

पौधशाला में पौध रोपड़ से एक दिन पूर्व रोगर या मेटासिस्टाक्स (1.5 मि0ली0) एवं मैंकोजोब (2.5 ग्रा0) प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

शहद के स्वादिष्ट एवं पौष्टिक उत्पाद

अनुराधा रंजन कुमारी[1], कमलेश मीना[1] एवं आर. एन. प्रसाद[2]

[1]कृषि विज्ञान केन्द्र, मल्हना, देवरिया
[2]भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी, उत्तर प्रदेश

शहद (मधु) एक बहुत ही मीठा पदार्थ है जो फूलों के रस या पौधों के दुसरे भागों के मीठे तत्वों से मधुमक्खियों द्वारा तैयार किया जाता है। पुराने जमाने से ही शहद का प्रयोग हर रीति–रिवाजों तथा औषधियों में किया जाता रहा है। यह अकेला या किसी अन्य खाद्य पदार्थ जैसे दुध, डबल रोटी, नींबू का रस आदि के साथ खाया जा सकता है, इसका सेवन शरीर को स्फूर्ति प्रदान करता है। शहद को एक सफल शिशु आहार माना जाता है। यह गाय या माँ के दूध में लोहे की कमी को पूरा करता है।

शहद में कई तरह के पोषक तत्व विद्यमान रहते है, इसलिए इसे अमृत के बाद का दूसरा स्थान दिया गया है। इसमें कार्बोहाइड्रेट काफी मात्रा में पाया जाता है। एक किलोग्राम शहद से 5500 कैलोरी उर्जा मिलती है। इसमें प्रोटीन, विटामिन तथा खनिज–लवण भी पाये जाते हैं। इसके अलावा इसमें अम्ल, रंजक तथा गंध प्रदान करने वाले पदार्थ भी पाए जाते हैं। यदि एक किलोग्राम शहद की उर्जा मूल्य दुसरे प्रकार के खाद्य पदार्थों के साथ तुलना करें तो यह 65 अंडों, 13 किग्रा. दुध, 19 किग्रा. हरे मटर, 12 किग्रा. सेब व 20 किग्रा. गाजर के बराबर हो सकता है।

भारत वर्ष में प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष शहद की खपत लगभग 25 ग्राम होती है जबकि अन्य देशों में इसकी खपत बहुत अधिक है। स्वीटजरलैण्ड और जर्मनी में 1.5 किग्रा से अधिक, अमेरिका में एक किग्रा. तथा फ्रांस, इग्लैड, जापान, इटली में 250 ग्राम प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष होती है। भारतवर्ष में अभी भी इसे दवा के रूप में प्रयोग किया जाता है तथा उर्जा दायक आहार के रूप में इसकी अनुभूति नहीं है।

मधु में लोहा, तांबा और मैगनीज सुक्ष्म मात्रा में होने से मधूपूर्ण आहार खाने के बाद रक्त में बढ़ोत्तरी हो जाती है। हमारे शरीर में कुछ सूक्ष्म मात्रिक तत्वों की आवश्यकता होती है, जिनके न मिलने से बिमारियां हो जाती हैं। शहद खाने से इन बिमारियों का उपचार हो जाता है। शहद का उपयोग व्यक्ति की आयु तथा स्थिति पर निर्भर करता है। शहद की कितनी भी मात्रा खाई जा सकती है, परन्तु अत्यधिक मधु का प्रत्यक्ष उपयोग ठीक नहीं होता है।

एक बच्चे के लिए	10–15 ग्राम प्रतिदिन
एक नवयुवक के लिए	30–35 ग्राम प्रतिदिन
स्वस्थ पुरूष के लिए	30–50 ग्राम प्रतिदिन
बूढ़े लोग के लिए	20–30 ग्राम प्रतिदिन
रोगी	डॉक्टर की सलाह के अनुसार

मधु की महता सर्वविदित है, परन्तु घरेलू उत्पाद के रूप में प्रचलन कम है। मधु अकेला ही नहीं बल्कि इसके साथ अन्य खाद्य पदार्थ मिलाकर विभिन्न प्रकार के आकर्षक उत्पाद तैयार किये जा सकते हैं। ये उत्पाद महिलाएं अपने घरेलू काम–काज के साथ इसे बनाकर बाजार में बिक्री हेतु तैयार कर सकती हैं। इसके बनाने की सरल एवं सुविधा जनक विधि निम्न प्रकार हैः–

मधु नींबू शर्बत (स्क्वैस)

सामाग्रीः मधु– 300 ग्राम, शक्कर– 200 ग्राम, नींबू रस– 250 मिली0, पोटैशियम मेटा बाई सल्फाइट– 0.15 ग्राम, साइट्रिक अम्ल– 0.50 ग्राम, जल– 250 मिली0

विधिः जल में चीनी मिलाकर उसे दो मिनट कि लिए उबाले फिर उसमें नींबू का रस मिलायें। मिश्रण को धीमी ऑच पर दो मिनट के लिए उबाले। ऑच बन्द करके उसमें मधु मिलायें। पोटैशियम मेटा बाई सल्फाइट और साइट्रिक अम्ल को थोड़ा सा जल में घोलकर मिश्रण में मिलायें। उसके बाद बोतल में भरकर हवा बन्द ढक्कन से बन्द कर दें। अगर ज्यादा समय के लिए संरक्षित करना हो तो उसमें संरक्षक मिलाकर रखें। इसे ठंडा करके प्रयोग करें।

सान्द्र रस के एक भाग को चार भाग पानी में मिलाकर प्रयोग करें।

मधु संतरे का शर्बत

सामाग्रीः संतरे का रस– 1 किग्रा., चीनी– 1 किग्रा., शहद– 600 ग्राम, पानी– 1 लीटर, साइट्रिक एसिड– 30 ग्राम

विधिः गुनगुने पानी में चीनी और साइट्रिक एसिड को डालकर अच्छी तरह घोले और एक बड़े पतीले में इसे छान लें। अब इसमें शहद और छना हुआ संतरे का रस डालकर मिलायें। इसे अच्छी तरह साफ और सूखी बातलों में भर लें।

शहद–मक्का चॉकलेट

सामाग्रीः शहद– 100 ग्राम, चीनी– 150 ग्राम, मलाई उतरा मिल्क पाउडर– 100 ग्राम, भुना मक्का पाऊडर– 100 ग्राम, चाकलेट पाऊडर–25 ग्राम।

विधिः मक्का, दूध और चाकलेट पाऊडर को शहद और चीनी के मिश्रण में धीमी आँच पर मिलाएं। इस मिश्रण को घी लगाई हुई ट्रे पर पलटें। इसे फिर से मिलाएं। जब यह मिश्रण ठंडा हो जाए तो इसे रोलिंग पिन से चपटा करें और टुकड़ो में काटें। इन टुकड़ों को लपेट लें। चॉकलेट तैयार है।

मधु जैम

सामाग्रीः मधु– 100 ग्राम, चीनी– 600 ग्राम, नींबू का रस– 1 नींबू का, तरल पेक्टिन– 100 मिली0, पानी– 500 मिली0।

विधिः समस्त दिये गये पदार्थों को एक बर्त्तन में मिलाएं एवं प्रेशर कुकर में उबालें। इसके बाद इसे अच्छी तरह से मिलायें तथा चौड़े मुँह वाली बोतल में रख लें।

मधु कैण्डी

सामाग्रीः मधु– 100 ग्राम, चीनी– 50 ग्राम, रस– एक नींबू का, पानी– 50 मिली0।

विधिः दिये गये समस्त तत्वों को मिलायें एवं बोतल में रख लें। इसे रेफ्रिजेरेटर में रखें। इसे बच्चे खासकर काफी पसन्द करते है।

मधु आइस क्रीम

सामाग्रीः कस्टर्ड पाऊडर– 2 चम्मच, दूध– 2 कप, आइसक्रीम– ½ कप, मधु– 1 कप।

विधिः कर्स्टड पाऊडर में थोड़ा दूध मिलायें। बचे हुए दूध को नरम करें एवं इसमें कस्टर्ड पाऊडर मिलायें तथा उबालें। इस दौरान इसे चलाते रहें। दो मिनट तक गरम करें तथा इसके पश्चात ऑच पर से उतार लें। उसमें मधु एवं क्रीम मिलायें तथा ट्रे में डालें। ट्रे को तुरन्त रफ्रीजिरेटर में डाले दें।

मधु जेली

सामाग्रीः मधु– 2.5 कप, पानी– 0.5 कप, फल का तरल पेक्टिन 1/2 बोतल, एसेंस,– जरूरत के हिसाब से

विधिः मधु एवं पानी को केतली में मिलायें एवं कम समय में अच्छी तरह से उबालें। इसके पश्चात् फल का तरल पेक्टिन इसमें डालें एवं लगातार चलाते रहें।

मधु चिक्की

सामाग्रीः मधु– 10 ग्राम, चीनी– 10 ग्राम, भुना हुआ मुगॅफली का दाना– 40 ग्राम, जीरा– 10 ग्राम।

विधि– समस्त तत्वों को पीसकर अच्छी तरह से मिलायें। इसके पश्चात् एक ट्रे में डाल दें। इसे ठंढ़ा होने दें, जिनके बाद जम जाएगा।

मधु साबुन

सामाग्रीः पीला साबुन– 1 किग्रा0, मधु– 500 ग्राम, एसेस– कुछ बुदें।

विधिः एक किलों पीले साबुन को छोटे–छोटे टुकड़ों में बाट दें तथा एक बर्त्तन में डाल दें। इसमें अच्छी मात्रा में पानी मिलायें ताकि गरम करने के दौरान यह जले नहीं। अब शहद मिलाएं तथा गरम करने के दौरान इसे चलाते

रहें। ऑच पर से हटाने के बाद इसमें एसेन्स की कुछ बुंदे डालें तथा चौड़े बर्त्तन में ठंडा होने रख दें। इसके बाद इसे वर्गाकार भाग में काट लें। इसे ठंडा होने दें। यह साबुन आपकी त्वचा के लिए लाभदायक साबित होगा।

शहद आम से बना शर्बत

सामाग्रीः शहद– 300 ग्राम, चीनी– 20 ग्राम, नींबू का रस– 250 मिली0, पोटैशियम मेटा बाई सल्फाइट– 0.15 ग्राम, साइट्रिक एसिड– 0.60 ग्राम, पानी– 250 मिली0।

विधिः पानी में चीनी को मिलाकर दो मिनट तक उबालें एवं इसमें नींबू का रस मिलायें। इसे कम ऑच पर दो मिनट तक उबालें। इसके बाद गरम करना बन्द कर दें, एवं शहद को मिलायें। पोटैशियम मेटा बाई सल्फाइट एवं साइट्रिक एसिड को थोड़े से पानी में मिलाकर इसमें मिला दें, जरूरी मात्रा में पानी अथवा मधु मिलाकर इसे 42 ब्राइम पर लें आयें। इसके बाद शर्बत को बोतल में डालकर अच्छी तरह से बन्द कर दें, ताकि हवा अन्दर न जा सके। अगर कुछ समय तक के लिए रखना हो तो प्रिजरवेटिव डालें। शर्बत के उपयोग हेतु एक भाग शर्बत एवं चार भाग पानी डालने से अच्छा स्वाद प्राप्त होगा।

मधु एवं अण्डा

सामाग्रीः मधु– 1–3 कप, अण्डा– 2 (उजला भाग), रस– एक नींबू का, पानी– 2 कप, नमक– 2 चम्मच

विधिः अण्डा का उजला भाग, मधु एवं नमक को तब तक मिलायें, जब तक यह कड़ा न हो जाय। इसे एक बर्त्तन में रख दें। इसमें बचे पदार्थों को मिला दें, तथा अच्छी तरह से मिलायें। इसे ठंडा कर खायें।

मधु मुरब्बा

सामाग्रीः मधु– 100 ग्राम, चीनी– 600 ग्राम, नींबू रस– एक नींबू का, तरल पेक्टिन– 100 मिली0, पानी– 500 मिली0

विधिः सभी तत्वों को मिलाकर प्रेशर कुकर में डालें तथा उबाले, अच्छी तरह मिलायें और चौड़े मुंह की बोतल में डालकर वायुरूध कर लें।

मधु गाजर सलाद

सामाग्रीः गाजर– 500 ग्राम, एक नींबू का रस, नमक– 1 चम्मच, शहद– 1 चम्मच, एक सेब, काली मिर्च, मिठी क्रीम (एक प्याली), सेब तथा अखरोट के टुकड़े

विधिः सेब तथा अखरोट के टुकड़े को एक साथ मिलाकर मधु के साथ गाजर का सलाद बना सकते हैं। क्रीम नमक, काली मिर्च, नींबू, पानी तथा मधु को मिलाएँ, गाजर तथा सेब के छिलके उतार कर महत्तर (वृहत्तर) से मसल लें। इन सबको सलाद, चटनी से मिला लें और गाजर सलाद के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

गेहूँ की नवीन एवं उन्नत किस्में अपनायें और पायें अधिक उत्पादन और आय

रामकुमार शर्मा, अम्बरीश कुमार शर्मा एवं अत्तर सिंह

आनुवांशिकी संभाग

भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान सस्थान, नई दिल्ली–110 012

किसी भी फसल में अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए उन्नत किस्में अपनाना पहली आवश्यकता है। संतोष की बात है कि वर्तमान वर्ष 2017–2018 में भारत में गेहूँ की खेती 29.72 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में की गई और इस दौरान उत्पादन 98.61 मिलियन टन एवं उत्पादकता स्तर 33.18 कुन्तल प्रति हेक्टेयर प्राप्त किया गया। आजादी के समय देश अनाज की कमी से जूझ रहा था उस समय गेहूँ पहली फसल थी जिसमें नई किस्मों के विकास से खाद्यान्न उत्पादन में आश्चर्यजनक वृद्धि प्राप्त की गई। भारतीय कृषि के इतिहास में इस घटना का उल्लेख किया गया है हरित क्रांति की सफलता से देश खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्म निर्भर हो गया। हरित क्रांति में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित गेहूँ की किस्मों ने महत्व पूर्ण योगदान दिया है। देश की बढ़ती आबादी खाद्य सुरक्षा के लिए आज भी एक चुनौती बनी हुई है। यह चुनौती कृषि योग्य भूमि के घटने (शहरीकरण और औद्योगिकीकरण) के कारण और भी तीव्र होने वाली है। ऐसी परिस्थिति में खाद्यान्न की बढ़ती माग को पूरा करने के लिए उत्पादकता स्तर बढ़ाना ही एक मात्र विकल्प बचता है। अतः देश में अन्य संस्थानों के साथ–साथ भा.कृ.अ.स. भी अनुसंधान द्वारा गेहूँ की नवीन उन्नत किस्मों का विकास कर रहा है। कुछ समय के बाद रतुआ आदि रोगों में नई जातियों के विकसित की गई किस्मों की उत्पादकता में कमी आ जाती है। इसी कारण गेहूँ की उन्नत किस्मों का विकास एक सतत प्रकिया है। किसान भाईयों को चाहिये कि वे केवल उनके क्षेत्र के लिए अनुमादित नवीनतम किस्मों को ही उगायें। इस हेतू गेहूँ की समय से बोई जाने वाली किस्मों और उनकी उत्पादन तकनीक का एक संक्षिप्त ब्योरा यहा दिया जा रहा है।

अधिक उत्पादकता के लिए अनुमोदित नवीनतम प्रजातियों का अपनाने का महत्व

अधिक उत्पादकता के लिए अनुमोदित नवीनतम प्रजातियों का चयन सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। नवीनतम प्रजातियां आनुवंशिक रूप से न केवल अधिक उत्पादन देने में सक्षम होती है। बल्कि प्रचलित रोगों के प्रति रोगरोधिता एवं बदलती जलवायु के प्रभाव को सहने का गुण भी इनमें होता है। उत्पादकता के अन्य कारक जैसे सिंचाई, उर्वरक आदि एक सक्षम एवं उपयुक्त आनुवंशिक किस्म के साथ ही वांछित नतीजे दे सकते हैं इसलिए आवश्यक है कि अधिक उत्पादन हेतु कृषक बंधु अपने क्षेत्र एवं परिस्थिति अनुसार गेहूँ की नवीनतम एवं अनुमोदित किस्मों के प्रमाणित बीजों को अपनायें।

गेहूँ उत्पादन के प्रमुख क्षेत्र एवं किस्मों का चयन

भारतवर्ष की भौगोलिक परिस्थिति, मृदा, जलवायु एवं रोगों की विविधता को ध्यान में रखते हुए देश भर को गेहूँ उत्पादन के 6 प्रमुख क्षेत्रों, में बांटा गया है। इनमें से चार क्षेत्र मैदानी क्षेत्रों में दो पर्वतीय क्षेत्रों मे हैं। नवीन किस्मों का विकास एवं विमोचन किसी विशेष क्षेत्र के लिए किया जाता है। ये किस्में उसी क्षेत्र मे मिट्टी पानी उपलब्ध तथा जलवायु परिस्थिति के अनुकूल होती है। अतः उपयुक्त किस्म चुनने के लिए उस का ध्यान रखना आवश्यक है। गेहूँ की खेती का आधिकांश क्षेत्र मैदानी क्षेत्रों में आता है। इन क्षेत्रों का विवरण निम्न प्रकार से हैः

1. उत्तर–पश्चिमी मैदानी क्षेत्र

देश के कुल गेहूँ उत्पादक क्षेत्र का लगभग 45 प्रतिशत क्षेत्र तथा उत्पादन की दृष्टि से 40–50 प्रतिशत का योगदान

देने वाली यह क्षेत्र उत्पादकता की दृष्टि से सर्वोपरि है। जल संसाधन की दृष्टि से यह क्षेत्र काफी धनी है। गेहूँ की समय से बुवाई वाली फसल पकने में 140–150 दिन का समय लेती है। भूरा व पीला रतुआ रोंग, कण्डुआ एवं करनाल बंट इस क्षेत्र में लगने वाले मुख्य रोग हैं। बालियों के पकने के समय गर्म हवाओं के कारण दाने सिकुड़ने की समस्या भी कुछ समय से दृष्टिगत हो रही है। पंजाब हरियाण पश्चिमी उत्तर प्रदेश (झांसी संभाग को छोड़कर) (राजस्थान, कोटा व उदयपुर संभाग को छोड़कर) जम्मू कश्मीर के जम्मू एवं कटुआ संभाग, हिमाचल प्रदेश की उना एवं पौटां घाटी एवं उत्तराखंड के तराई क्षेत्र इस क्षेत्र में आते हैं।

2. उत्तरपूर्वी मैदानी क्षेत्र

पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखण्ड, ओडिशा, पश्चिम बंगाल एवं पूर्वोत्तर राज्यों के मैदानी क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करने वाली ये क्षेत्र, देश के कुल गेहूँ क्षेत्रफल एवं उत्पादन में लगभग 30 प्रतिशत का योगदान देती है। सर्दी अथवा कम तापमान की अवधि कम होने के कारण गेहूँ की समय से बोई गयी फसल लगभग 125 दिन में तैयार हो जाती है। उत्तर पूर्वी भारत में धान–गेहूँ एक प्रमुख फसल चक्र है तथा अक्सर गेहूँ की बुवाई में देरी हो जाती है एवं गर्म हवाओं के चलने से दाने सिकुड़ जाते हैं। भूरा रतुआ एवं झुलसा रोग इस क्षेत्र के प्रमुख है।

3. मध्य क्षेत्र

उच्च गुणवत्ता वाले गेहूँ उत्पादन के लिए जानी जाने वाली यह क्षेत्र, देश के कुल गेहूँ क्षेत्रफल में 20 प्रतिशत तथा उत्पादन में 15 प्रतिशत का योगदान देती है। पानी की उपलब्धता इस क्षेत्र की प्रमुख समस्या है। अधिक तापमान के कारण समय से बोई गई फसल 120 दिन में पककर तैयार हो जाती है। भूरे एवं काला रतुआ रोग, जड़ विगलन एवं फसल की ज्यादातर अवधितापमान का होना मुख्य समस्याएं है। इन क्षेत्रों के अंर्तगत मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात, राजस्थान का कोटा उदयपुर संभाग और उत्तर प्रदेश का झांसी संभाग क्षेत्र आते हैं। इस क्षेत्र में डयूरम गेहूँ की खेती की जाती है।

4. प्रायद्वीपीय क्षेत्र

महाराष्ट्र, कर्नाटक, गोवा, आंध्रप्रदेश एवं तमिलनाडु के मैदानी क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करने वाली इस क्षेत्र में चपाती, मैक्रोनी डयूरम गेहूँ के अलावा झाडकॉकम गेहूँ का उत्पादन भी किया जाता है। देश के कुल गेहूँ उत्पादक क्षेत्रफल का 5 प्रतिशत एवं उत्पादन में लगभग 2 प्रतिशत का योगदान देने वाली इस क्षेत्र में समय से बुवाई की गई फसल 105–110 दिन मे पककर तैयार हो जाती है। क्षेत्र में पानी की उपलब्धता की समस्या है तथा अधिकांश क्षेत्रफल वर्षाश्रित है। भूरा, काला रतुआ रोग गेहूँ की फसल के मुख्य रोग हैं।

मैदानी क्षेत्रों में गेहूँ का बुवाई का उपयुक्त समय है। जब दिन रात का औसत तापमान 21–23 डिग्री सेन्टीग्रेड हो जाता है। साधारणतया यह तापमान नवम्बर माह के दौरान हो जाता है। उत्पादकता एवं उत्पादन के स्तर को बढ़ाने के लिए समय की बुवाई एवं सिचिंत अवस्था का विशेष महत्व है ताकि फसल विकास को पूर्ण अवधि मिल सके। देर से एवं अतिदेर से बुवाई करने से गेहूँ के उत्पादन में क्रमशः कमी एवं अधिक कमी आती है। गेहूँ की समय से बुवाई का समय 5 से 25 नवम्बर तक करनी चाहिए। इस प्रकार असिंचित एवं सीमित सिंचाई की परिस्थितियों में उपज में कमी आती है।

तालिका–1 समय से बुवाई के लिए नवीनतम प्रजातियाँ

क्षेत्र	परिस्थिति	प्रजातियां
उत्तर–पश्चिमी मेदानी क्षेत्र	सिंचित समय से बुवाई	एच.डी. 2967 एच.डी. 3086 डब्लयू.एच 1105 डी.बी.डब्लू 621–50 डब्लू.बी. 2 पी. बी.डब्लू. 723 एच.पी.बी.डब्लू. 01
	असिंचित समय से बुवाई	पी.बी.डब्लू. 644 पी.बी.डब्लू. 660 डब्लू.एच. 1080
	सीमित सिंचाई एवं समय से बुवाई	एच.डी 3043 डब्लू.एच. 1142

उत्तर पूर्वी मेदानी क्षेत्र	सिंचित समय से बुवाई	एच.डी. 2967 के. 9107 एन.डब्लू. 5054 डी.बी.डब्लू. 39 के. 1006
	असिंचित समय से बुवाई	एच.डी. 2888 के. 8027 एम.ए.सी.एस 6145 एच.डी. 3171 के. 1317
मध्य क्षेत्र	सीमीत सिंचाई समय के बुवाई	एच.आई. 1612 डी.बी. डब्लू 110 एच.आई. 1531
	सिंचित समय से बुवाई	एच.आई. 1544 जी. डब्लू. 366 जी. डब्लू. 322 एच.आई. 8498 (डयूरम) एच.आई. 8737 (डयूरम) एच.डी. 4728 (डयूरम) एच.आई. 8759 (डयूरम) एम.पी.ओ.1215 (डयूरम)
	असिंचित समय से बुवाई	एच.आई. 1500 (अतृता) एच.आई. 8627 (डयूरम) एच.आई. 4672 (डयूरम) यू.ए.एस. 446 एम.पी.ओ. 1588
प्रायद्विपीय क्षेत्र	सिंचित अवस्था समय से बुवाई	डी.बी. डब्लू. 168 एम.ए.सी.एस. 6478 एम.ए.सी.एस. 6222
	असिंचित अवस्था समय से बुवाई	एम.ए.सी.एस. 4028 यू.ए.एस. 347 यू.ए.एस. 375 एच.आई. 8777 एन.आई 5439 के. 9644 एच.डी. 2781
	सीमित सिंचाई एवं समय से बुवाई	एच.आई. 1605 डी.बी.डब्लू. 93 एन.आई.ए.डब्लू. 1415 सीमित एवं असिंचित दोनों अवस्था के लिए

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित किस्मों के गुण

एच.डी. 3171: भूरा, काला एवं पीला रतुआ रोगरोधी यह प्रजाति उत्तर पूर्वी मैदानी क्षेत्रों की असिंचित अवस्था हेतु वर्ष 2016–2017 में अनुमोदित की गई है। इस प्रजाति की औसत पैदावार 2.81 टन प्रति हेक्टेयर है। पकने की अवधि 120 दिन है।

एच.आई 1605: प्रायद्वीपीय क्षेत्र में सीमित सिंचाई अवस्था हेतु वर्ष 2016–2017 में अनुमोदित की गई है। इस प्रजाति की औसत पैदावार 3 टन प्रति हेक्टेयर है एवं उपज क्षमता 4.4 टन प्रति हेक्टेयर है। मध्यम ऊँचाई वाली यह प्रजाति 105–10 दिन में पककर तैयार हो जाती है। अच्छी चपाती की गुणवत्ता वाली यह प्रजाति काले एवं भूरे रतुआ रोगरोधी है।

एच.डी. 4728 (डयूरम गेहूँ): वर्ष 2016–2017 में मध्य क्षेत्र की सिंचित एवं समय से बुवाई के लिए जारी डयूरम गेहूँ की इस किस्म की औसत पैदावार 5.42 टन प्रति हेक्टेयर एवं उपज क्षमता 6.8 टन प्रति हेक्टेयर है। रतुआ रोग रोधी यह प्रजाति 90 सेमी. लम्बी, अच्छे फुटाव वाली एवं 120 दिन में पक जाती है।

एच.आई. 1612: वर्ष 2016–2017 में पर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखण्ड, ओडिशा, सिक्किम, पश्चिम बंगाल, असम और उत्तर पूर्वी राज्यों की सीमित सिंचाइ एवं समय से बुवाई के लिए अनुमोदित इस प्रजाति की औसत पैदावार 37.6 कु. प्रति हेक्टर है। यह प्रजाति पीले एवं भूरे रतुआ झुलसा, करनाल बंट आदि रोगों के लिए प्रतिरोधी किस्म है। चपाती के लिए उच्च गुणवत्ता वाली प्रजाति है।

एच.आई. 8777: वर्ष 2016–2017 प्रायदीपीय क्षेत्रों की असिंचित एवं समय से बुवाई के लिए अनुमोदित डयूरम गेहूँ की इस प्रजाति की औसत उपज 18.5 कु. प्रति हेक्टेयर है। काले एवं भूरे रतुआ रोगों के लिए प्रतिरोधी इस किस्म के दान मोटे आकार के (1000 दानो का वनज 43 ग्राम) एवं गुणवत्ता उत्तम स्तर की है।

एच.आई. 1605: वर्ष 2016 प्रायदीपीय क्षेत्रों की सिंचित एवं समय से बुवाई की दश के लिए यह प्रजाति अनुमोदित की गई है। भूरे एवं काले रतुआ रोगों के लिए प्रतिरोधी यह किस्म 105 से 110 दिन में पककर तैयार हो जाती है।

चपाती के लिए उच्च गुणवत्ता वाली इस प्रजाति की औसत उपज 44 कु. प्रति हेक्टर है।

एच.डी. 3086 (पूसा गोतमी): वर्ष 2013 में पंजाब हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान (कोटा एवं उदयपुर संभागों के अलावा), उत्तर प्रदेश (झांसी संभाग के अलावा), जम्मू एवं कश्मीर के भाग (कठुआ जिला), हिमाचल प्रदेश के भाग (ऊना जिला एवं पौंटा घाटी) एवं उत्तराखण्ड (तराई क्षेत्र) में सिंचित अवस्था में समय पर बुवाई के लिए जारी किस्म। इसकी औसत उपज 54.6 कु. प्रति हेक्टेयर। यह एक मध्य बोनी (93 सेमी.) किस्म है, जो 143 दिनों में पक कर तैयार हो जाती है। इस किस्म में पत्ती एवं स्ट्राइप रतुओं के लिए उच्च स्तर की प्रतिरोधकता है। इस किस्म में लूज स्मट एवं फ्लैग स्मट के प्रति भी उच्च स्तर की प्रतिरोधकता विद्यमान है। यह किस्म रोटी के बनाने के लिए भी उत्तम है, क्योंकि इसका ग्लू–1 आंकड़ा 10/10 है। इस किस्म के दानों की दिखावट का आंकड़ा, हैक्टोलीटर वजन उच्च ब्रेड बनाने वाली औद्योगिक इकाइयों में माँग अच्छी है।

एच.डी. 3043 (पूसा चैतन्य): वर्ष 2011 में पंजाब हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान (कोटा एवं उदयपुर संभागों के अलावा), उत्तर प्रदेश (झांसी संभाग के अलावा), जम्मू एवं कश्मीर के भाग (कठुआ जिला), हिमाचल प्रदेश के भाग (ऊना जिला एवं पौंटा घाटी) एवं उत्तराखण्ड (तराई क्षेत्र) में सिंचित अवस्था में समय पर बुवाई के लिए अल्प सिंचित अवस्था में उगाने के लिए अनुमोदित किस्म। इसकी औसत उपज 42.8 कु. प्रति हेक्टेयर है इस किस्म में पत्ती एवं धारीधार धब्बा रतुआ के प्रति उच्च श्रेणी की प्रतिरोधकता है। इसमें रोटी बनाने के लिए अति उत्तम एच.एम.डब्लयू. उप–इकाई के सभी संयोग ग्लू–1 के आंकड़े 10/10 के साथ उपस्थित है। इस किस्म में अच्छी रोटी बनाने एवं ब्रेड लोफ वॉल्यूम गुणवत्ता का आंकडा ऊँचा है। यह एक मध्यम बोनी किस्म है, जो 143 दिनों में पक कर तैयार हो जाती है

एच.डी. 2967: वर्ष 2011 में पंजाब हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान (कोटा एवं उदयपुर संभागों के अलावा), पूर्वी उत्तर प्रदेश, जम्मू एवं कश्मीर के मैदानी क्षेत्र, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड, बिहार, झारखण्ड, ओड़िशा, पश्चिम बगाल, असम व उत्तरी पूर्वी राज्यों के मैदानी क्षेत्र के सिंचित अवस्था में समय पर बुवाई के लिए अनुमोदित किस्म है। इसकी औसत उपज 50 कु. प्रति हेक्टेयर है यह किस्म बृहत क्षेत्रों में अच्छी उपज देती है। इस किस्म में सभी प्रचलित रतुआ रोगों के प्रति प्रतिरोधकता है। यह किस्म पत्ती झुलसा रोग के प्रति भी अच्छी प्रतिरोधी है। इसकी पकने की अवधि उत्तर–पश्चिमी क्षेत्रों में 143 दिन है।

एच.डी. 2888 (पूसा गेहूँ) : वर्ष 2006 पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखण्ड, ओड़िशा, सिक्किम, पश्चिम बगाल, असम और उत्तरी पूर्वी राज्यों के मैदानी क्षेत्र में बारानी अवस्था में समय पर बुवाई के लिए अनुमोदित किस्म है। इसकी औसत उपज 22.5 कु. प्रति हेक्टेयर है। यह किस्म तना व पत्ती रतुआ रोग के लिए अत्यधिक प्रतिरोधी है तथा पीला रतुआ के लिए मध्यम प्रतिरोधी है। दानों से गुणवत्तापूर्ण पोषक तत्वों से भरपूर आटे की अधिक मात्रा प्राप्त होती है। इसकी पकने की अवधि 135–143 दिन है।

एच.आई. 1531 (हर्षिता) : वर्ष 2006 मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ गुजरात, राजस्थान के कोटा व उदयपुर संभाग और उ.प्र. का झाँसी संभाग की वर्षा आधारित, सीमित सिंचाई व अगेती बुवाई हेतु अनुमोदित इसकी औसत उपज 25–40 कु. प्रति हेक्टेयर। यह रोटी के लिए अति उत्तम, भूरे व काले रतुओं के लिए प्रतिरोधी। इसकी पकने की अवधि 130–135 दिन है।

एच.आई. 8327 (मालव कीर्ति) डयूरम गेहूँ : वर्ष 2005 मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ गुजरात, राजस्थान के कोटा व उदयपुर संभाग और उ.प्र. का झाँसी संभाग की वर्षा आधारित, सीमित सिंचाई व अगेती बुवाई हेतु अनुमोदित है इसकी औसत उपज 25–40 कु. प्रति हेक्टेयर है। यह उच्च गुणवत्ता, प्रचुर विटामिन–ए, सुजी व दलिया के लिए उत्तम, भूरे व काले रतुओं के लिए प्रतिरोधी है। इसकी पकने की अवधि 130–135 दिन है।

एच.डी. 8327 (मालव रत्न) डयूरम गेहूँ : वर्ष 2000 मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ गुजरात, राजस्थान के कोटा व उदयपुर संभाग और उ.प्र. का झाँसी संभाग की वर्षा आधारित एवं अगेती बुवाई हेतु अनुमोदित है। इसकी औसत उपज 20–25 कु. प्रति हेक्टेयर है। यह उच्च गुणवत्ता,

सुजी व दलिया के लिए उत्तम, भूरे व काले रतुओं के लिए प्रतिरोधी है। इसकी पकने की अवधि 120–125 दिन है।

एच.आई. 8498 (मालव शक्ति) डयूरम गेहूँ : वर्ष 1999 मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात, राजस्थान के कोटा व उदयपुर संभाग और उ.प्र. का झाँसी संभाग की सिंचित एवं समय पर बुवाई के लिए अनुमोदित है। इसकी औसत उपज 50–60 कु. प्रति हेक्टेयर है। यह किस्म सुजी व दलिया के लिए उच्च गुणवत्तायुक्त, भूरे व काले रतुओं के लिए प्रतिरोधी है। इसकी पकने की अवधि 120–125 दिन है।

एच.डी. 2987 (पूसा बहार) : वर्ष 2010 में महाराष्ट्र, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, गोवा व तमिलनाडु का मैदानी क्षेत्र की सीमित सिंचाई एवं बारानी अवस्था में समय पर बुवाई के लिए अनुमोदित है। इसकी औसत उपज 20–22 कु. प्रति हेक्टेयर एवं सीमित सिंचाई 30–32 कु. प्रति हेक्टेयर है। यह किस्म ब्रेड बनाने की गुणवत्ता से युक्त है।

एच.आई. 8737 (पूसा अनमोल) डयूरम गेहूँ : वर्ष 2014 में मध्य क्षेत्र की समय से सिंचित परिस्थितियों के लिए डुरूम गेहूँ की अनुमोदित किस्म है। इसकी औसत उपज 5.34 टन/हे. है। यह किस्म कैरोटिन तथा आयरन व जिंक जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों से भरपूर है और इसमें करनाल बंट के विरुद्ध प्रतिरोधकता का अच्छा स्तर भी प्रदर्शित करती है।

एच.आई. 8759 (पूसा तेजस) डयूरम गेहूँ : वर्ष 2017में मध्य क्षेत्र की समय से सिंचित अवस्था में समय से बुवाई के लिए जारी की गई डयूरम गेहूँ की प्रजाति है। इसकी औसत उपज 5.7 टन/हे. है। यह पास्ता, चपाती एवं अन्य सभी पारम्परिक व्यंजनों को बनाने के लिए उपयुक्त किस्म है। यह किस्म भूरे और काले रतुआ के प्रति अत्यंत प्रतिरोधी है।

एच.आई. 1544 (पूर्णा) : वर्ष 2007 में मध्य प्रदेश छत्तीसगढ़, गुजरात, राजस्थान का कोटा व उदयपुर संभाग और उत्तर प्रदेश का झाँसी संभाग की सिंचित एवं समय पर बुवाई के लिए अनुमोदित है। इसकी औसत उपज 50–55 कु./हेक्टेयर है। यह रोटी के लिए उत्तम, भूरे व काले रतुआ के लिये प्रतिरोधी तथा 110–115 दिन मे पकने वाली किस्म है।

उपरोक्त किस्मों के बीज प्राप्त करने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के एटिक तथा बीज उत्पादन इकाई से संपर्क किया जा सकता है।

सस्य क्रियायें	सिंचित समय से बुवाई	असिंचित समय से बुवाई
बीज दर (किग्रा./है.)	100	125
बुवाई का समय	5–25 नवंबर	25 अक्तूबर – 14 नवंबर
उर्वरक की मात्रा (ना.फा.पो. किग्रा./है.) एवं समय	(1/2 ना. पूरी फॉ. पो. बुवाई के समय आधार खुराक के रूप में, 1/2 नत्रजन की मात्रा प्रथम सिंचाई के बाद)	60:40:20 ना. फॉ. पो. (गेहूँ) 40:40:20 ना. फॉ. पो. (जौ) पूरी मात्रा बुवाई के समय आधार खुराक के रूप में
सिंचाई	प्रथम सिंचाई बुवाई के 21 दिन बाद एवं आगे आवश्यकता अनुसार	यदि संभव हो तो एक सिंचाई बुवाई के 30 दिन बाद
खरपतवार नियंत्रण	लीडर 33 ग्रा./है. बुवाई के 27–35 दिन बाद	
रोग नियंत्रण	कण्डुआ रोग की रोकथाम के लिए कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्रा./किग्रा. बीज की दर से बीजोचार करें	कण्डुआ रोग की रोकथाम के लिए कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्रा./किग्रा. बीज की दर से बीजोचार करें
कीट नियंत्रण	पत्ती व तना कुतरने वाले कीटों की रोकथाम के लिए इमीडाक्लोप्रिड (20 ग्रा. सक्रिय तत्व/है.) या क्युनलफॉस 25 ई.सी. (250–480 ग्रा./है.) का प्रयोग करें।	पत्ती व तना कुतरने वाले कीटों की रोकथाम के लिए इमीडाक्लोप्रिड (20 ग्रा. सक्रिय तत्व/है.) या क्युनलफॉस 25 ई.सी. (250–480 ग्रा./है.) का प्रयोग करें।

अधिक जानकारी के लिए टाल फ्री नम्बर 1800 11 8989 पर भी संपर्क किया जा सकता है।

रबी मक्का की खेती के लिए उन्नत सस्य विधियां

गोपाल लाल चौधरी[1], कैलाश प्रजापत[2], एवं राम स्वरूप बाना[3]

[1]सस्य विज्ञान विभाग, बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर, भागलपुर–813210
[2]केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल–132001
[3]सस्य विज्ञान संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

भारत में बोई जाने वाली धान्य फसलों में धान एवं गेहूँ के बाद मक्का तीसरी महत्वपूर्ण फसल है। मक्का खरीफ मौसम की फसल है लेकिन प्रकाश निष्प्रभावी किस्मों के विकास के बाद इस फसल को किसी भी समय उगाया जा सकता है। रबी के मौसम में उगायी गयी मक्का की पैदावार अधिक होती है। मक्का की फसल जल भराव एवं सूखा दोनों स्थितियों के प्रति संवेदनशील होती है। अधिक वर्षा की स्थिति में मक्का की फसल को जल भराव से बचाना चाहिये। प्रमुख मक्का उत्पादक राज्य आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, बिहार, राजस्थान एवं उत्तर प्रदेश है। देश से कुछ क्षेत्रों में मक्का की खेती खरीफ, रबी एवं गरमी तीनों मौसमों में की जाती है। हमारे देश में मक्का की औसत पैदावार केवल 27 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है जो शोध संस्थानों की 50–70 क्विंटल प्रति हेक्टेयर से बहुत कम है। कम उत्पादकता के मुख्य कारण मक्का के अर्न्तगत अधिकांश क्षेत्रफल का असिंचित होना, पुरानी देशी किस्में उगाना, उर्वरकों का असंतुलित उपयोग एवं खेती की अवैज्ञानिक व परम्परागत सस्य विधियाँ अपनाना आदि हैं। मक्का के महत्व एवं खाद्यान्न की बढ़ती हुई मांग को देखते हुए मक्का की उत्पादकता बढ़ाना आवश्यक हो गया है और यह तभी संभव है जब मक्का की अधिक उपज देने वाली नवीनतम संकर एवं संकुल प्रजातियों की खेती उन्नत सस्य विधियाँ अपनाकर की जाये।

खेत का चुनाव व तैयारी

मक्का की खेती देश के विभिन्न भागों में भिन्न–भिन्न प्रकार की मृदाओं में की जाती है, परन्तु अच्छे जल निकास वाली बलुई दोमट या दोमट मृदा जिसका पी.एच. मान 5.5–7.5 के बीच हो, इसकी खेती के लिए सर्वोत्तम होती है। मक्का की खेती के लिए लवणीय एवं क्षारीय मृदा उपयुक्त नहीं रहती है। मक्का की फसल के लिए मृदा में जल निकास की उचित व्यवस्था होना बहुत आवश्यक है। निचली मृदाओं में जहां पर पानी भरता हो, इसकी खेती नहीं करनी चाहिए। जहाँ की मृदा क्षारीयता से प्रभावित हो वहां प्रति तीसरे वर्ष जिप्सम 5 टन प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। जिप्सम की आवश्यकता मृदा पी.एच. मान के अनुसार भिन्न हो सकती है। जिप्सम को बुआई के लगभग एक महिना पहले जमीन में मिला देना चाहिए। अच्छी उपज लेने के लिए खेत को अच्छी तरह से तैयार कर लें, इसके लिए पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल या हैरो से करने के बाद 2–3 जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करें। बीज की बुआई से पहले पाटा चला कर खेत को समतल कर लेना चाहिए तथा बुआई के समय खेत खरपतवार रहित होना चाहिए।

उन्नत किस्में

देश के विभिन्न राज्यों के लिए रबी मक्का की उपयुक्त किस्में नीचे तालिका में दी गयी हैं–

राज्य	उन्नत किस्में
दिल्ली	पी.एम.एच. 3, बुलंद, एच.एम. 8, एच.एम. 11
पंजाब	पी.एम.एच. 1, पी.एम.एच. 3, बुलंद, शीतल, एच.एम. 8, एच.एम. 11
हरियाणा	पी.एम.एच. 3, बुलंद, एच.एम. 1, एच.एम. 2, एच. एम. 5, एच.एम. 8, एच.एम. 11
उत्तर प्रदेश	पी.एम.एच. 3, बुलंद, एच.एम. 8
कर्नाटक	डी.एम.एच. 1, डी.एम.एच. 2
बिहार	राजेन्द्र संकर मक्का 1, राजेन्द्र संकर मक्का 2, सबौर संकर मक्का 1, डी.के.सी. 9135, हेमंत, सुआन, लक्ष्मी

बुआई का समय : रबी मक्का की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए फसल की बुआई अक्टूबर के अन्तिम सप्ताह से

नवम्बर के दूसरे सप्ताह तक कर देनी चाहिए। इसके बाद बुआई में देरी करने से फसल की उत्पादकता दिन प्रतिदिन कम होती जाती है।

बीज की मात्रा : सफल फसल उत्पादन के लिए उचित बीज दर के साथ उचित दूरी पर बुआई करना आवश्यक होता है। बीज की मात्रा उसके आकार, अंकुरण प्रतिशत, बौवाई का तरीका एवं समय, बुआई के समय भूमि में उपस्थित नमी की मात्रा पर निर्भर करती है। सामान्यतया एक हेक्टेयर क्षेत्रफल में बुआई के लिए 20–22 किग्रा. बीज की आवश्यकता पड़ती है।

बीजोपचार : बुआई से पहले बीजों को उपचारित करके बोना चाहिए। बीजोपचार के लिए 3 ग्राम थाइरम अथवा 2 ग्राम मेन्कोजेब या कार्बेण्डाजिम (बॉविस्टीन) कवकनाशक दवाई प्रति किलो ग्राम बीज की दर से बीजोपचार करने से फसल पर लगने वाले रोगों को काफी हद तक कम किया जा सकता है। कवकनाशक से बीजोपचार के बाद फसल में अंकुरण व शुरूआती वृद्धि की अवस्था में लगने वाले कीड़ों की रोकथाम के लिए बीजो को ईमिडाक्लोप्रिड़ नामक दवाई से 4–5 मि.ली. प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।

बुआई की विधि : बुआई के लिए कतार के कतार की दूरी 60 सें.मी. एवं पौधे से पौधे की दूरी 20 सें.मी. रखें तथा बीज को 4 से 5 सें.मी. गहराई पर बौयें। यदि बीज अधिक गहराई पर बौया गया है तो बीज का जमाव अच्छा नहीं होता है। मक्का का बीज बुआई के 5–6 दिन बाद अंकुरित हो जाता है। परन्तु तापमान कम होने पर अंकुरण में 10–12 दिन का समय लगता है। यदि पंक्ति में बीजों का पूरा अंकुरण न हुआ हो तो शीघ्र ही रिक्त स्थानों में नया बीज डाल देना चाहिए।

पोषक तत्व प्रबंधन

कार्बनिक खादें : कार्बनिक खादों में पोषक तत्व बहुत कम मात्रा में पाये जाते हैं परन्तु इनके उपयोग से मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक दशाओं में सुधार होता है जिससे मृदा की जल धारण क्षमता एवं उर्वरता में वृद्धि होती है। कार्बनिक खादें पौधों को मुख्य पोषक तत्वों के साथ–साथ सूक्ष्म पोषक तत्व भी प्रदान करती है। मक्का की फसल के लिए 8.0 से 10 टन प्रति हेक्टेयर की दर से अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद बुआई के एक माह पूर्व खेत में डालकर जुताई कर अच्छी तरह मृदा में मिला दें। गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट का उपयोग तीन साल में एक बार अवश्य करना चाहिए।

जैव उर्वरक : जैव उर्वरकों जैसे एजेटोबेक्टर, एजोस्पाइरीलम, पी.एस.बी., वॉम आदि के उपयोग से फसल उत्पादन में 15 से 20 प्रतिशत तक वृद्धि की जा सकती है। समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन के लिए 20 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से एजोटोबैक्टर एवं पी.एस.बी. से बीजोपचार लाभदायक रहता है, इससे नत्रजन एवं फास्फोरस की उपलब्ध्ता बढ़ती है व उपज में वृद्धि होती है। जैव उर्वरकों को सीधे मृदा में भी प्रयोग कर सकते हैं। मृदा में प्रयोग करने के लिए 8–10 किलोग्राम मात्रा को प्रति हेक्टेयर के हिसाब से फसल बुआई से पहले अच्छी तरह से मृदा में मिलाकर उपयोग करें।

उर्वरकों का उपयोग : मृदा की उर्वरता एवं उत्पादकता बनाये रखने के लिए उर्वरकों का संतुलित उपयोग बहुत आवश्यक होता है। संतुलित उर्वरक उपयोग के लिए नियमित भूमि परीक्षण आवश्यक होता है। मृदा परीक्षण के आधर पर उर्वरकों की मात्रा निर्धारित की जा सकती है। मक्का की फसल भूमि से अत्यधिक मात्रा में पोषक तत्वों का अवशोषण करती है। अतः अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि फसल में उचित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग किया जायें। लम्बी अवधि की किस्मों से अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए 150–180 किलोग्राम नत्रजन, 70–80 किलोग्राम फॉस्फोरस तथा 70–80 किलोग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता पड़ती है, जबकि मध्यम एवं जल्दी कम अवधि वाली किस्मों के लिए क्रमशः 100–120 एवं 80–100 किलोग्राम नत्रजन तथा 60 किलोग्राम फास्फोरस तथा 40 किलोग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से उपयोग करना चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा एवं फॉस्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा बुआई के समय, बीज से 5 सेंमी. नीचे मृदा में देना चाहिए तथा नत्रजन की शेष आधी मात्रा को खड़ी फसल में 2–3 बार में छिटक कर देना चाहिए। नत्रजन की अन्तिम मात्रा पौधों में मंजर निकलते समय

देनी चाहिए। मंजर निकलने के बाद नत्रजन का उपयोग नहीं करना चाहिए।

मक्का की फसल से अधिक उपज प्राप्त करने के लिए सूक्ष्म पोषक तत्वों का उपयोग अति आवश्यक होता है। जिंक की कमी वाली मृदा में जिंक डालने से करीब 15 से 20 प्रतिशत तक पैदावार में वृद्धि होती है। जिंक की पूर्ति हेतु भूमि में बुआई से पहले 25 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर अकेले या जैविक खाद के साथ प्रयोग किया जा सकता है। अगर खड़ी फसल में जिंक की कमी के लक्षण दिखाई दें तो 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट व 0.25 प्रतिशत बुझे हुए चूने (200 लीटर पानी में 1 किलो ग्राम जिंक सल्फेट तथा 0.5 किलो ग्राम बुझे हुए चूने) का घोल बनाकर पर्णीय छिड़काव करना चाहिए।

उर्वरकों का पर्णीय छिड़काव :– अगर खडीं फसल में पोषक तत्वों की कमी के लक्षण दिखाई देने लगें एवं मृदा में नमी के अभाव में उर्वरक प्रयोग संभव नहीं हो तो इस दशा में उर्वरकों का पर्णीय छिड़काव लाभदायक होता है। नत्रजन की पूर्ति हेतु मक्का में 3 प्रतिशत यूरिया का पर्णीय छिड़काव फूल आते समय करना चाहिए। इसके लिए प्रति लीटर पानी में 30 ग्राम यूरिया को मिलाकर घोल तैयार करे एवं प्रति हेक्टेयर 500 से 700 लीटर घोल की दर से छिड़काव करें। आजकल पर्णीय छिड़काव हेतु बाजार में NPK उर्वरक उपलब्ध है। पर्णीय छिड़काव हेतु उपयुक्त NPK उर्वरक (19:19:19) की 5–6 ग्राम मात्रा का प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर मक्का की फसल में फूल आते समय एवं दाना बनते समय छिड़काव करने से काफी फायदा होता है। रबी मक्का में तापमान कम होने पर फसल की वृद्धि रूक जाती है। इस दशा में NPK उर्वरक के पर्णीय छिड़काव द्वारा फसल से अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है। बारानी क्षेत्रों में उर्वरकों के पर्णीय छिड़काव से पौधों को पोषक तत्वों के साथ–साथ कुछ मात्रा में पानी भी प्राप्त हो जाता है। जिससे पत्तियां लंबे समय तक हरी बनी रहती है एवं प्रकाश संश्लेषण की क्रिया होती रहती है।

खरपतवार प्रबंधन

खरपतवार फसल के साथ जल, पोषक तत्वों, स्थान एवं प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं। खरपतवारों को खेत से निकालने और नमी संरक्षण के लिए बुआई के 20 से 25 दिन बाद निराई–गुड़ाई करनी चाहिए। खरपतवारों के कारण मक्का की उपज में 30 से 40 प्रतिशत तक की कमी आ जाती है। यांत्रिक खरपतवार नियंत्रण के लिए खुरपी एवं खस्सी (हैण्ड हो) का प्रयोग किया जाता है। रासायनिक खरपतवार प्रबंधन के लिए एट्राजिन की एक किलोग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से 800 लीटर पानी में घोल बनाकर बुआई के 1–3 दिनों में छिड़काव कर भूमि में भली–भांति मिला देना चाहिए परन्तु यह ध्यान रहें की छिड़काव के समय मृदा में उचित नमी होनी चाहिए। खड़ी फसल में खरपतवारों के रासायनिक प्रबंधन के लिए एट्राजिन की 0.50 किलोग्राम सक्रिय तत्व मात्रा को प्रति हेक्टेयर की दर से 500–600 लीटर पानी में घोल बनाकर बुआई के 15–20 दिनों बाद छिड़काव करने से सभी प्रकार के खरपतवारों को प्रबंधन किया जा सकता है। अगर फसल में केवल चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों का प्रकोप हो तो 2,4–डी. सोडियम लवण की 750 ग्राम सक्रिय मात्रा का प्रति हेक्टेयर की दर से बुआई के 20–25 दिन बाद छिड़काव करें।

पौधों की जड़ों पर मिट्टी चढ़ाना

मक्का के पौधों की जड़ों पर अंतिम निराई गुडाई के साथ मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए। मिट्टी चढ़ाने से मक्का के तने की निचली गांठो से निकलने वाली वायवीय जड़ें आसानी से मिट्टी में प्रवेश कर जाती है एवं पौधों के तने को सहारा देने का काम करती है। पौधों की जड़ों पर मिट्टी चढ़ाने से तेज हवा में पौधों के गिरने की संभावना कम हो जाती है। मिट्टी चढ़ाने का कार्य फसल की 45 दिनों की अवस्था तक कर पूर्ण कर लेना चाहिए।

जल प्रबंधन

रबी मक्का की फसल सामान्यतया वर्षा के अभाव में पूर्णतया सिंचाई जल पर ही आश्रीत रहती है। रबी मक्का में 5 से 7 सिंचाईयों की आवश्यकता होती है। रबी एवं जायद मक्का में आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए। रबी मक्का में अंकुरण, घुटने तक की ऊंचाई, फूल आते समय एवं दाना भरते समय पानी की कमी नहीं होनी चाहिए। मक्का की फसल जल भराव के प्रति संवेदनशील होती है अतः हमेशा हल्की सिंचाई करनी चाहिए। अधिक वर्षा की

स्थिति में फसल को जल पलावन की स्थिति से बचाने हेतु उचित जल निकास की व्यवस्था करनी चाहिए।

पादप संरक्षण

मक्का की फसल में अनेक कीट एवं रोग लगते है जो फसल की उपज वृद्धि तथा टिकाउपन में एक प्रमुख समस्या है। इस फसल को कीटों एवं रोगों से काफी नुकसान पहुंचता है जिससे इसकी उपज में काफी कमी हो जाती है। यदि समय रहते इन रोगों एवं कीटों का प्रबंधन कर लिया जाये तो मक्का की उत्पादकता में बढ़ोत्तरी की जा सकती है। तना छेदक, तना मक्खी, दीमक, पाइरिला, आर्मीवर्म, कटवर्म आदि मक्का के मुख्य नाशी कीट, जबकि पत्ती का अंगमारी, रतुआ, तना विगलन, मृदुरोमिल आसिता (डॉऊनी मिल्डयू) आदि मक्का के मुख्य रोग हैं।

मक्का के प्रमुख कीट एवं प्रबंधन

तना छेदक : इसकी गिडार अथवा सूंडियां छोटे पौधों की गोभ को काट देती हैं जिससे गोभ सूख जाती है। इसका प्रभाव बुआई के 15 दिन बाद से आरंभ होकर फसल में भुट्टे आने के समय तक होता है। पौधे की बढ़वार के साथ ही ये तने में सुरंग सी बना लेती हैं और अन्दर ही अन्दर तने के मुलायम हिस्सों को खाती हैं जिसके परिणामस्वरूप पौधे के शीर्ष भाग की मृत्यु हो जाती है जिसे 'डैड–हर्टस' के नाम से जाना जाता है। इसकी रोकथाम के लिए बुआई के 25 दिनों बाद कार्बोफ्युरॉन (3 प्रतिशत) दानेदार कीटनाशक को 7.5 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से डालना चाहिए तथा 10 दिनों के बाद दूसरा छिटकाव इसी मात्रा में पौधों की गोभ में करना चाहिए।

तना मक्खी : इस कीट का प्रभाव भी बुआई के 15 दिन बाद से आरंभ होकर फसल में भुट्टे आने के समय तक होता है। पौधे की बढ़वार के साथ ही ये तने में सुरंग सी बना लेती हैं और अन्दर ही अन्दर तने के मुलायम हिस्सों को खाती हैं जिसके परिणामस्वरूप पौधे के वृद्धि वाले भाग की मृत्यु हो जाती है। जिन क्षेत्रों में तना मक्खी का प्रकोप अधिक होता हो उन क्षेत्रों में रबी मक्का की बुआई कुछ देरी से करनी चाहिए जिससे इस कीट से होने वाले नुकसान को कम किया जा सकता है। बुआई से पहले बीजों को ईमिडाक्लोप्रिड़ नामक दवाई से 6 मि.ली. प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। खड़ी फसल में इसकी रोकथाम के लिए मैलाथियान 5 प्रतिशत पाउडर अथवा मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत पाउडर का 25 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से भुरकाव दो बार करे। पहला भुरकाव बुआई के 10 दिन बाद एवं दूसरा बुआई के 20 दिन बाद करे।

दीमक : यह सूखे की स्थिति में पौधे की जड़ों तथा तनें को काटती हैं। जड़ काटने से पौधे सूख जाते हैं। इसके प्रबंधन हेतु क्लोरपाईरीफॉस 4.5 मि.ली. प्रति किलो ग्राम बीज दर से बीजोपचार करें। खड़ी फसल में दीमक के प्रबंधन हेतु क्लोरपाईरीफॉस 3 लीटर प्रति हेक्टेयर के हिसाब से उपयुक्त नमी होने पर मिट्ठी में मिलाकर खेत में डालें। नमी की कमी होने पर सिंचाई जल के साथ दें। फिप्रोनिल 0.3 जी.आर. के 20 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से उपयोग द्वारा भी दीमक का प्रबंधन किया जा सकता है।

मक्का के प्रमुख रोग एवं प्रबंधन

पत्ती का अंगमारी : यह मक्का का सबसे हानिकारक कवक जनित रोग है। यह रोग अधिक आर्द्रता की स्थिति में होता है। रोग ग्रसित पौधों की निचली पत्तियों पर भूरे हरे या भूरे रंग के लम्बें अंडाकार घाव दिखाई देते हैं। रोग की उग्र अवस्था में रोग के लक्षण निचली पत्तियों से ऊपर की पत्तियों पर फैलने लगते हैं। इस रोग की रोकथाम के लिए रोगरोधी किस्में उगानी चाहिए और पौधों पर रोग के लक्षण दिखाई देने पर मैंकोजेब अथवा जिनेब का 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

रतुआ : मक्का की फसल में इस बिमारी के लक्षण पौधों में मंजर निकलते समय दिखाई देते हैं। रोग की आरंभिक अवस्था में पत्ती की उपरी एवं निचली सतहों पर गोलाकार से लम्बें सुनहरी भूरे रंग के धब्बें दिखाई देनें लगते हैं जो आगे की अवस्था में भूरे काले रंग के हो जाते हैं। रोग की रोकथाम के लिए समय पर पकने वाली रोगरोधी किस्में उगानी चाहिए और पौधों पर रोग के प्रथम लक्षण दिखाई देते ही मैंकोजेब का 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

तना विगलन : यह रोग कवक एवं जीवाणु दोनों से होता है। पौधों पर इस रोग का प्रभाव फूल आने से पहले एवं फूल आने के बाद दोनों समय पर होता है। अधिक तापमान एवं आर्द्रता इस रोग के विकास के लिए लाभदायक होते है। कवक रोग ग्रसित पौधों के तने पर मृदा सतह के पास में मुलायम एवं भूरे रंग के पानी से लथपथ घाव दिखाई देते हैं एवं रोग की अधिकता में संक्रमित स्थान पर से तना सड़ जाता है एवं पौधा टूटकर गिर जाता है। इसके विपरीत जीवाणु जनित रोग के लक्षण पूरे पौधें पर दिखाई देते हैं। जीवाणु जनित रोग से ग्रसित पौधों की पत्तियों एवं तनों पर गहरे भूरे रंग के पानी से लथपथ घाव दिखाई देते हैं एवं रोग ग्रसित पौधें संक्रमित स्थान पर से सड़कर टूट जाते है। रोग के प्रबंधन के लिए कैप्टान 75 प्रतिशत दवा की 12 ग्राम मात्रा को 100 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें अथवा ब्लीचिंग पाउडर जिसमें 33 प्रतिशत क्लोरीन हो की 10 किलोग्राम मात्रा को मिट्टी में मिलावें।

मृदुरोमिल आसिता : मक्का में यह रोग भी कवक द्वारा लगता है। रोग के लक्षण पौधें की उपरी नई पत्तियों पर पहले दिखाई पड़ते हैं। जिसमें पत्तियों की निचली सतह पर सफेद रंग का चूर्ण जमा हो जाता है। रोग ग्रसित पत्तियां पीली पड़कर झड़ जाती हैं। यदि रोग का आक्रमण फसल की प्रारम्भिक अवस्था में हो जाता है तो पौधों की वृद्धि रूक जाती है तथा पौधें में भुट्टे नहीं निकलते हैं। रोग की रोकथाम के लिए रोगग्रस्त पौधों को उखाड़ कर जला देना चाहिए, बीज को बुआई से पूर्व थाइरम या वीटावैक्स से 2.5 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए तथा फसल पर रिडोमिल का 0.1 प्रतिशत की दर से छिड़काव करना चाहिए।

फसल कटाई

मक्का की दाने के लिए कटाई तब करें जब भुट्टों के ऊपर की पत्तियां सूखने लगें तथा दाना सख्त हो जाए। इस समय दानों में 25–30 प्रतिशत नमी रहती है। कटाई के लिए खड़ी फसल से पहले भुट्टों को काटकर अलग कर ले एवं बाद में पौधों को काट लेवें अथवा पहले पौधों को काट लेवें एवं बाद में भुट्टों को काटकर अलग कर ले।

फसल मड़ाई (गहाई)

फसल कटाई के बाद भुट्टों को 8 से 10 दिन तक धूप में अच्छी प्रकार से सुखा कर दाना अलग कर लेना चाहिए। थ्रैसर द्वारा दाना अलग करना लाभदायक रहता है। दाना निकालने के बाद उनको साफ करके बोरों में भर लेवें एवं 11 से 12 प्रतिशत नमी की अवस्था में सूखे स्थान पर भण्डारण करें।

कद्दू–वर्गीय सब्जियों की अंतर–रिले फसल उत्पादन प्रौद्योगिकी

सुरेश चंद राणा व संजय सिरोही

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान क्षेत्रीय स्टेशन, करनाल–132001

फल एवं औद्यानिकी प्रौद्योगिकी संभाग

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

वर्तमान में निरन्तर बढती जनसंख्या के कारण न केवल खाघ एंव अन्य पदार्थो की मांग बढती जा रही है बल्कि बढते शहरीकरण के कारण भु–जोत क्षेत्र के आकार व खेती के लिए उपलब्ध भूमि की भी कमी हो रही है। ऐसी परिस्थितियों में आवश्यक है कि हमारे किसान भाई प्रति ईकाई क्षेत्र से एक वर्ष में अधिक उत्पादन व लाभ लेकर अपनी आय में वृद्धि करें। इसके लिए उन्हे विभिन्न फसलों व फसल प्रणालियों का चयन इस प्रकार करना होगा कि उनके खेत की उर्वरा शक्ति भी बनी रहे तथा साथ ही अधिक मूल्य वाली फसलों को सम्मिलित करने से उनकी सकल आय में वृद्धि हो। बहू–फसलीय कृषि के अंतर्गत रिले खेती फसल उत्पादन की एक परंपरागत एवं महत्वपूर्ण पद्धति है जिसके उपयोग से किसान सीमित संसाधनों (भूमि, समय, पानी, श्रम आदि) एवं कम लागत से फसल लेने में सक्षम होता है। गेहूँ में कद्दू–वर्गीय सब्जियों की अंतर–रिले फसल उत्पादन तकनीक से धान–गेहूँ फसल चक्र प्रणाली वाले क्षेत्रों में गेहूँ कटाई के बाद तथा धान की रोपाई तक (अप्रैल से जून तक) किसान भाई खेत का उपयोग कद्दू–वर्गीय सब्जियों के बीज व फसल उत्पादन हेतु सफलतापूर्वक कर सकते है।

भारत में कद्दू–वर्गीय कुल की लगभग 20 प्रकार की सब्जियों की खेती की जाती है। इनमें घीया/लौकी, तोरी, करेला, खीरा, तरबूज, खरबूज, ककड़ी, पेठा/कद्दू/सीताफल, चप्पनकद्दू, टिण्डा, परवल, फुट, आदि मुख्य है। ये सभी बेलवाली फसलें होती हैं जो बहुत सी दूसरी फसलों की तुलना में प्रति ईकाई क्षेत्र में अधिक पैदावार देती है और कम समय में तैयार हो जाती है। ये सब्जियां कम कैलोरी व सरलता से पचने वाली होने के साथ–साथ विटामिन्स, अमीनो अम्ल एवं खनिज लवणों का अच्छा स्त्रोत है।

रिले फसल उत्पादन विधिः उत्तर भारत के मैदानी भागों में साधारणत्या गाजर, आलू, मटर, सरसों, तोरिया आदि की फसल लेने के उपरांत अधिकतर किसान जनवरी के अंत से लेकर मार्च के प्रथम पखवाड़े तक कद्दू–वर्गीय सब्जियों की बुवाई बीज द्वारा करते हैं तथा फसल की पैदावार अप्रैल से जून माह तक चलती है। दिसंबर या जनवरी माह में पॉलीथीन घर में थैलियों में तैयार किये गए पौधों को मध्य फरवरी से मार्च के प्रथम सप्ताह में (पाला पड़ने का खतरा समाप्त होने पर) रोप कर इन फसलों की अगेती फसल भी ली जाती है। कई किसान भाई गेहूँ की कटाई उपरांत थैलियों में तैयार किये गए पौधों को खेत में रोपकर या बीज लगाकर इन फसलों की खेती करते है परंतु जून माह में बरसात आने के कारण खरबूज, तरबूज, पेठा, टिडां आदि सब्जियों की गुणवत्ता में कमी आने से आर्थिक हानि होने की सभांवना बनी रहती है। गेहूँ में कद्दू–वर्गीय सब्जियों की अंतर–रिले फसल उत्पादन विधि के उपयोग से किसान भाई गेहूँ के खेत का उपयोग इन सब्जियों के उत्पादन हेतु सफलतापूर्वक कर सकते है।

रिले फसल उत्पादन की इस पद्धति में गेहूँ (आधार फसल) की बुवाई के समय ही कद्दू–वर्गीय वर्गीय सब्जियों (उत्तेरा फसल) के लिए भी योजना बना ली जाती है। गेहूँ की बीजाई हेतु खेत तैयार करते समय 4.5–5.5 मीटर की दूरी पर 45 सै. मी. चौड़ी व 30–40 सेमी. गहरी नालियां बना कर छोड़ देतें है। नालियों के बीच में गेहूं की बीजाई की जाती है। गेहूँ की बीजाई (अक्टूबर–दिसंबर) से लेकर जनवरी तक इन नालियों को खाली रखते हैं। इस अवधि के दौरान इन नालियों का उपयोग तोरीया, सरसों, पालक, मेथी मूली, गाजर आदि अंतर–फसल उगाकर भी किया जा सकता है। अगर गेहूँ की बीजाई हेतु खेत तैयार करते समय नालियां नहीं बनाई गई हों तो जनवरी या फरवरी

माह के प्रारंभ में 4.5–5.5 मीटर की दुरी पर नालियां (6–8 नालियां प्रति एकड़) तैयार करते हैं। नालियों के किनारों पर 50–60 सेमी. की दूरी पर थावले बना लेते हैं तथा नालियों को खरपतवार रहित कर लिया जाता है। नालियों में तैयार किए गए इन थावलों में फरवरी के मध्य में बीज या पौध का रोपण करते हैं। पौध रोपाई के तुरंत बाद हल्की सिचांई करना आवश्यक होता है। पौध तैयार करने हेतु प्लग ट्रै या पॉलीथीन बैग का प्रयोग करते हैं। पॉलीथीन बैग में पौध तैयार करने हेतु 15 सेमी. लम्बे तथा 10 सेमी. चौड़ाई वाले पॉलीथीन (100–200 गॉज) के थैलों में मिटटी, रेत व खाद का मिश्रण बनाकर भर लेते हैं। प्रत्येक पॉलीथीन बैग की तली में 4–5 छोटे छेद कर लिए जाते है तथा मिश्रण भरते समय यह घ्यान रखते है कि प्रत्येक पॉलीथीन बैग के किनारे पर 2–3 सेमी. जगह पानी देने के लिए खाली रहे। इन थैलों में बीज बोने से पहले बीज को फफुंदी नाशक से उपचारित कर लें। प्रत्येक थैले में 2–3 उपचारित बीज दिसंबर–जनवरी माह में लगाए जाते है। बीजों की बुवाई के बाद थैलों में हल्की सिचांई फव्वारे की मदद से करते हैं। बीज अंकुरित होने पर प्रत्येक थैले में एक स्वस्थ पौधा छोड़कर बाकी पौधे निकाल देते है। पॉलीथीन बैग में तैयार किये जाने वाले पौधों को ठंड से बचाने हेतु आवश्यकतानुसार पॉलीथीन घर का प्रयोग किया जाता है। खेत में पौधे लगाने की इस विधि में खाद व उर्वरकों का प्रयोग, निराई–गुड़ाई व सिंचाई आदि क्रियाएं नालियों के अंदर ही की जाती है। गेहूँ कटाई के उपरांत नालियों के अंदर फैली बेलों को नालियों से बाहर निकाल कर फैला देतें है। बेलें नालियों के बीच में गेहूँ के कटे उंठलों के उपर चढ कर सारे खेत में फेल जाती हैं। सिंचाई नालियों के अंदर ही की जाती जिससे फल गीली मिट्टी के सम्पर्क में नहीं आते तथा खराब होने से बच जाते हैं। इस विधि में लंबी फैलने वाली कद्दू–वर्गीय फसलें जैसे घीया/लौकी, तोरी, तरबूज, खरबूज, पेठा/कद्दू/सीताफल आदि अधिक उपयोगी है।

लाभः इस विधि को अपनाने से धान–गेहूँ फसल चक्र प्रणाली वाले उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में गेहूँ कटाई के बाद तथा धान की रोपाई तक (अप्रैल से जून) किसान भाई खेत का उपयोग कद्दू–वर्गीय सब्जियों (घीया/लौकी, तोरी, तरबूज, खरबूज, पेठा/कद्दू/सीताफल आदि) के बीज व फसल उत्पादन हेतु सफलतापूर्वक कर सकते हैं। गेहूँ में कद्दू–वर्गीय सब्जियों की रिले फसल उत्पादन विधि का उपयोग करने से (जून माह के अंत तक) खरबूज, तरबुज, घीया व पेठा में क्रमशः 175, 300, 300 एवं 350 क्विंटल प्रति हेक्टेयर फलों की पैदावार होती है जबकि गेहूँ कटाई के उपरांत मूंग व लोबिया उगाने पर क्रमशः 10 क्विंटल दाने एवं 30 क्विंटल फलिंयां (सब्जी) प्रति हेक्टेयर की दर से प्राप्त होती है। धान–गेहूँ फसल प्रणाली के अंतर्गत विभिन्न फसलों के आर्थिक विशलेषण में पाया गया कि धान–गेहूँ, धान–गेहूँ–मूंग, धान–गेहूँ–लोबिया व धान–गेहूँ–खरबूज फसल चक्र से क्रमशः 1.80, 2.25, 2.50 तथा 3.50 लाख रूपये प्रति हेक्टेयर की दर से सकल आय प्राप्त होती है। गेहूँ में बेल–वर्गीय सब्जियों की अंतर–रिले फसल उत्पादन की यह विधि इन सब्जियों का क्षेत्रफल व उत्पादन बढाने के साथ–साथ, किसानों की आमदनी बढाने में भी उपयोगी है। वर्तमान में यह विधि यमुना नदी के साथ लगते हरियाणा व उत्तर प्रदेश के किसानों द्वारा उपयोग में लाई जा रही है तथा आय के एक नए वैकल्पिक स्त्रोत के रुप में उभर कर आई है।

सारिणी–1: कद्दू–वर्गीय सब्जियों की उन्नत किस्में, बीज दर, फलों एवं बीज की पैदावार

फसल	उन्नत किस्में	बीज दर (किलो प्रति एकड़)	फलों की औसत पैदावार (क्वि./एकड)	बीज की औसत पैदावार (किलो/एकड)
तरबुज	सुगरबेबी, अरका मणिक, अरका मणिक, अरका ज्याति	1.5–2.0	125–150	75–80
कद्दू	पूसा विश्वास, पूसा विकास, पूसा हाइब्रिड–1	1.5–2.0	125–150	100–150
खरबूज	पूसा मधुरस, पूसा मधुरिमा, पूसा शर्बती, हिसार मधुर, हरामधु	1.0	60–80	60–70

घीया/लौकी	पी.एस.पी.एल., पूसा नवीन, पूसा संदेश, पूसा समृद्धि, पूसा संतुष्टी,	1.5.2.0	125–150	150–180
पेठा	पूसा श्रेयाली, पूसा उज्जवल, पूसा उर्मी, काशी घवल	1.5–2.0	125–150	100–110
तोरी	पूसा स्नेहा, पूसा सूप्रिया, पूसा नुतन	1.5–2.0	40–60	60–70

सारिणी–2: कद्दूवर्गीय सब्जियों के प्रमुख कीट एवं रोग तथा उनके नियंत्रण के उपाय

कीट/रोग	हानि के लक्षण	नियंत्रण
माहू या चेपा	इस कीट के निम्फ व वयस्क तने, कोमल पत्तियों व पुष्पकलिकाओं से रस चुसते हैं।	ईमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. या थायोमिथेक्साम 70 डब्लू.एस. 0.5.0–70 मि0लि0 दवा प्रति लिटर पानी की दर से छिड़काव करें।
लीफ माइनर	यह कीट पत्तियों के उपरी भाग पर टेढी–मेढी भूरे रंग की सुरंग बनाता है तथा इसका लारवा पत्तियों को हानि पहुंचाता है।	
सफेद मक्खी	इसका प्रकोप पत्तों की निचली सतह पर शिराओं के बीच में होता है। यह कीट पत्तियों से रस चुसता है। इसके प्रभाव से पत्तियां पीली हो जाती है तथा पत्ते सिकुड़कर नीचे की तरफ मुड़ जाते हैं। सफेद मक्खी विषाणु रोग का प्रसार भी करती है।	
फल भेदक मक्खी	फल भेदक मक्खी का प्रकोप फरवरी से लेकर नवंबर तक होता हैं। मादा मक्खी अपने अंड रोपक से कोमल फलों के गूदे में अंडे देती है। मैगट/शिशु फलों के अंदर गूदे को खाकर हानि करता है।	डाइमिथोएट 30ई0 सी0 अथवा मेलाथियान 50ई0सी0 अथवा मिथाइल डेमेटोन 25ई0सी0 1–1.5 मि0लि0 दवा प्रति लिटर पानी की दर से छिड़काव करें।
लाल कद्दू भृंग	इस कीट के ग्रब (प्यूपा) एवं भृंग (व्यक्स) दोनो ही पौधों को हानि पहुंचाते हैं। ग्रब (प्यूपा) छोटे पौधों के तनों में जमीन के पास से छेद कर देते हैं जिससे पौधा सूख जाता है। ये ग्रब (प्यूपा) जमीन पर रखे फलों के निचले भाग में छेद कर फलों को हानि पहुंचाते हैं। भृंग (व्यक्स) पौधों की पत्तियों व फूलों को खाकर नष्ट करता है।	
तना विगलन/ कॉलर रोट	भूमि की सतह के पास पौधों के तनों पर भूरे रंग के पनीले तथा नरम धब्बे बनते हैं। पौधे पीले पड़कर सूख जाते हैं।	ट्राइकोडर्मा विरिडी 4 ग्राम अथवा कार्बाडांजिम 2 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचार करें।
फल गलन	यह रोग भूमि के सम्पक्र में आने वाले फलों में अधिक होता है। संक्रमित फलों पर रूई के समान फफूंद जाल फैल जाता है।	फलों को भूमि के सम्पक्र में आने से बचाया जाना चाहिए। डाइथेन एम–45 के 0.25 प्रतिशत के घोल का छिड़काव करें।
चूर्णील आसिता	इसके लक्षण पत्तियों व तनों की सतह पर सफेद या धुंधले धूसर सुक्ष्म आभा युक्त धब्बों के रूप प्रगट होते है जो बाद में सफेद चूर्ण के रूप में फैल जाते है। पत्तियां पिली पड़ जाती है तथा पौधे की बढवार रुक जाती है।	10–15 दिन के अंतर पर कैराथेन के 0.30 प्रतिशत के घोल का छिड़काव करें।
मृदु रोमिल आसिता	आरंभ में इस रोग से ग्रसित पौधों की पत्तियों, तने व डटंलों पर छोटे पीले या जलाभ् धब्बे दिखाई देते है जो बाद में मिलकर बड़े हो जाते है। फलों पर गोल सिकुड़े हुए जलाभ् धब्बे बन जाते हैं।	मैंकोजैब या कार्बाडांजिम के 0.20 से 0.30 प्रतिशत के घोल का छिड़काव करें।

प्याज एवं लहसुन के कीट व रोग की रोकथाम

रोहित राणा, एस. चक्रवर्ती, एवं प्रतिभा जोशी

कृषि प्रौद्योगिकी आंकलन एवं स्थानांतरण केंद्र,
भा.कृ.अनु.प.– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

प्याज व लहसुन भारत में उगाई जाने वाली सब्जियों की प्रमुख फसलें हैं। अमेरीकन कैंसर अनुसंधान संस्थान का ये मानना है कि प्याज और लहसुन में ऐसे पोषक तत्व होते हैं जो कई तरीको से हमारे स्वास्थ के लिए लाभदायक होते हैं। चूँकि प्याज में गंधक युक्त यौगिक पाये जाते हैं इसी वजह से प्याज में गंध और तीखापन होता है। लेकिन यदि आप प्याज और लहसुन खाते हैं तो आपके स्वास्थ को लाभ प्रदान करता है। मौसम में आर्द्रता तथा तापमान का लगातार उतार चढ़ाव कीड़ों एवं बीमारियों को न्योता देता है जिसके कारण फसलों को सुरक्षित रखना बहुत मुश्किल होता है। प्याज और लहसुन की उत्पादकता को प्रभावित करने में मुख्यतः दो प्रकार के वाहय कारक होते हैं, अजैविक कारक (तापमान, धूप, वर्षा तथा वातावरण की आर्द्रता इत्यादि) एवं जैविक कारक (कीड़े, बीमारियां और खरपतवार)। जैविक कारकों में भी बीमारियाँ मुख्य कारक है जो प्याज और लहसुन को नुकसान करते हैं। निम्नलिखित कृषि पद्धतियों तथा कृषि रसायनों द्वारा फसल की अवस्था तथा कीटों एवं बीमारियों के आक्रमण के अनुसार कीटों एवं बीमारियों को नियंत्रित किया जा सकता है।

कीट प्रकोप एवं प्रबंधन

1. थ्रिप्स

थ्रिप्स प्याज एवं लहसुन का मुख्य कीट है। जो विश्व भर में पाया जाता है। ये आकार मे छोटे, 1–2 मि.मी. लंबे कोमल कीट होते हैं। ये कीट सफेद–भूरे या हल्के पीले रंग के एवं इनके मुखांग रस चूसने वाले होते हैं। शिशु व वयक्स दोनों ही पत्तियों को चीरकर तथा खुरचकर रस पीते हैं। इसके अलावा फूलों में भी नुकसान होने की वजह से बीज कम बनते हैं। थ्रिप्स से प्रभावित पौधे की पत्तियों पर सफेद धब्बे और धारियाँ दिखाई देती हैं। इस कीट का अधिक प्रकोप होने पर पत्तियाँ सिकुड़ जाती हैं और पौधे की बढ़वार रुक जाती हैं जिससे उपज में कमी हो जाती है।

2. प्याज की मक्खी

यह मक्खी प्याज एवं लहसुन की फसल का प्रमुख कीट है। प्याज की मक्खी बहुत ही नाजुक, धूसर–भूरे रंग की लगभग 5–7 मि.मी. की होती है। जब अंडों से लार्वा निकलते हैं तो वे जड़ को खाते हैं और पूरे जड़ तंत्र को नष्ट कर देते हैं। अंडे से निकली हुए छोटी सूँडी पत्ती के खोल मे रेंगती हुए कंद में प्रवेश कर जाती है और जड़ तंत्र को खाती है। जिससे भूमि के पास वाले तने का भाग सड़कर नष्ट हो जाने से पूरा पौधा सुख जाता है। कभी कभी इस कीट द्वारा फसल में बहुत क्षति होती है।

3. माईट

यह भारतीय उपमहाद्वीप में प्याज और लहसुन का एक उभरता हुआ एवं महत्वपूर्ण अष्टपदी है। इसके शिशु प्रायः लाल रंग के होते हैं और 4 जोड़े पैर पाये जाते हैं। मादाएँ लाल और आकृति कुछ कम या अधिक अंडाकार होती हैं। शिशु और वयक्स प्रारंभिक अवस्था मे पत्ती के निचले हिस्से पर खाते हैं और पत्तियों की ऊपरी सतह छोटे बिन्दुओं से भर जाती है जो की इस कीट के खाने के छिद्र होते हैं। ये कीट प्रायः पत्ती की गॉब और शिराओं के पास भी खाते हैं। इन अष्टपदीयों द्वारा उत्पादित जाल/रेशम आमतौर पर दिखाई देता है। अधिक प्रकोप होने पर पत्तियों का रंग उड़ने लगता है परिणामस्वरूप वे फीकी पड़ जाती हैं तथा कभी–कभी गिरने लगती हैं।

समेकित कीट प्रबंधन

- खेत को साफ और खरपतवार मुक्त रखें। प्याज और लहसुन की कीट ग्रसित पौध को खेत में न लगाए तथा लगातार एक ही वर्ग की फसल खेत में लगाने से

बचना चाहिए। ऐसी फसल जिस पर प्याज व लहसुन के कीट न खायें उन्हें फसल चक्र पद्धति में अपनाएँ।

- यदि खेत के चारों तरफ 2 पंक्ति मक्का की या एक बाहरी पंक्ति मक्का की और अंदर की पंक्ति गेहूं की लगा दी जाए तो उससे थ्रिप्स वयक्स खेत में 80% तक कम हो सकती है। ये कीटनाशी के प्रयोग को भी कम करने में मददगार है।
- थ्रिप्स रंग के प्रति बहुत संवेदनशील होती है, तो रंगीन मल्च (पलवार)– खासकर नीला–धूसर पलवार इसके नियंत्रण के लिए प्रयोग किया जा सकता है।
- प्याज और लहसुन को ऐसी मिट्टी में न उगाएँ जिसमें अविघटित कार्बनिक पदार्थ यानि बिना सड़े हुये जैविक अवशेष ज्यादा मात्रा में हो।
- पौधे से पौधे की उचित दूरी बनाकर प्याज एवं लहसुन की बुवाई करें (10 सेमी. पौधे से पौधे X 15 सेमी. कतार से कतार, प्याज एवं लहसुन के लिए। लहसुन के पुत्ति 5–7.5 सेमी. गहराई पर बोएँ)।
- बाढ़ सिचाई या अधिक बारिश जमीन में माईट की जनसंख्या के स्तर को कम करने में मदद करती है।
- कीटनाशीयों का आवश्यकता अनुसार बुवाई के 30 दिन बाद और 10–15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।
- पौध की जड़ को कार्बेण्डाजिम 0.1% (1ग्राम/लीटर) कार्बोसल्फान 0.025% (0.25 ग्राम/लीटर) घोल में 2 घंटे तक रखने पर कवक जनित रोग तथा थ्रिप्स के नुकसान से 30–40 दिनों तक मुख्यः खेत में बचा जा सकता है।
- थ्रिप्स की रोकथाम के लिए डाईमिथोएट 30% ई. सी. 300 मि.ली./एकड़ की दर से प्रयोग करें।
- माईट की रोकथाम के लिए डाइकोफाल 18.5 ई. सी. /1000 मि.ली./एकड़ का प्रयोग करें।

रोग एवं उनका प्रबंधन

खेत में होने वाले रोग

1. आर्द्रगलन रोग

आर्द्रगलन रोग लहसुन और प्याज की फसल का प्रमुख रोग है और पौधे में दो अवस्था में होता है : (क) अंकुरण से पहले (इस अवस्था में बीज और अंकुर जमीन से निकालने से पहले ही सड़ जाते हैं) और (ख) अंकुरण के बाद (इस अवस्था में कवक पौधे के तने को संक्रमित करता है जिससे पौध कमजोर पड़ जाती है और मर जाती है)। यह रोग खरीफ में लगभग 60–70% तक नुकसान करता है।

रोकथाम

- प्याज और लहसुन की पौध तैयार करने के लिए स्वस्थ एवं बीमारी रहित बीज का ही प्रयोग करें।
- पौध तैयार करने की जगह को हमेशा बदल–बदल कर ही प्रयोग करें हर बार एक ही जगह पौध तैयार न करें।
- खरीफ के मौसम में पौधशाला की क्यारियाँ जमीन की सतह से उपर बनानी चाहिए जिससे की पानी इकट्ठा न हो।
- मिट्टी सौरीकरण (Soil Solarization): नर्सरी बेड को बुवाई से 30 दिन पूर्व 250 गेज की पोलिथीन से ढक दें।
- ट्रैकोडर्मा विरिडी 4–5 कि. ग्रा. प्रति हेक्टेयर कि दर से इस रोग कि रोकथाम/निवारण के लिए प्रयोग कर सकते हैं।
- नर्सरी लगाने से पूर्व मिट्टी की ऊपरी पर्त को थिरम या केप्टान 5 ग्राम/मी^{2} की दर से भी उपचारित कर सकते हैं।
- बीज को थिरम या केप्टान 2 ग्राम/कि. ग्रा. बीज की दर से उपचरित करें।

2. बैंगनी धब्बा रोग

गर्म एवं आर्द्र मौसम इस रोग के विकास के लिए बहुत उपयुक्त होता है। यह रोग भूमि जनित रोग है अतः फफूंद मिट्टी में, फसल के अवशेष और खरपतवार की जड़ों पर विकसित होती है। इस रोग के लक्षण पौधे की पतियों, तनों एवं फूलों के डंठल पर सफेद रंग के धब्बे दिखाई देते हैं जो बाद में बैंगनी रंग के हो जाते हैं। यह रोग पत्ती के चारों तरफ फेल जाता है और पत्तियाँ गिरने लगती हैं जिससे प्याज और लहसुन में कंद और बीज नही बन पाते है।

रोकथाम

- अच्छी रोगरोधी किस्म के बीजों का प्रयोग करें।
- नत्रजन का प्रयोग उचित मात्रा में ही करें।
- खेत में 2–3 साल का लंबा फसल चक्र बिना प्याज वर्गीय फसलों के साथ अपनायें।
- फफूंदनाशियों का सही समय पर और विवेकपूर्ण प्रयोग इस रोग से बचा सकता है।
- पौध रोपाई के 40–45 दिन बाद कापर ऑक्सी क्लोराइड 50% डब्लू पी या मैनकोजैब 65% डब्लू. पी. कार्बेन्डाजीम12% डब्लू पी 300–400 ग्राम प्रति एकड़ कि दर से प्रयोग करें। कुछ अन्य कवकनाशी भी इस रोग की रोकथाम के लिए प्रयोग कर सकते हैं जैसेः डाईफेनोकोनाजोल 25% ई.सी. (100 मि.ली. 100 लीटर पानी में), किटाजीन 48% ई.सी. (200 मिली. 200 लीटर पानी में), टेबुकोनाजोल 25.9% ई.सी.(0.63–0.75 मि. ली. 500 लीटर पानी में) इत्यादि।

3. झुलसा रोग

यह रोग पत्तीयों और बीज के डंठलों पर पहले छोटे–छोटे सफेद और हल्के पीले धब्बों के रूप में पाया जाता है। बाद में यह धब्बे एक–दूसरे से मिलकर बड़े भूरे रंग के धब्बों में बदल जाते हैं और अंत में ये गहरे भूरे या काले रंग के हो जाते हैं। प्रभावित पत्तीयाँ धीरे–धीरे सिरे कि तरफ से सुखना शुरू होती है और आधार की तरफ बढ़कर पूरी सुख जाती है। इसमे संक्रमण पहले पुरानी पत्तीयों पर फैलता है। इससे पौधे और कंद का विकास नही हो पाता है।

रोकथाम

- खेत में अच्छी जल निकासी इस रोग के प्रकोप से बचा सकती है।
- खेत में 2–3 साल का लंबा फसल चक्र बिना प्याज वर्गीय फसलों के साथ अपनाये।
- पौध कि जड़ों को कार्बेन्डाजीम के घोल में डूबाकर रोपाई करने से इस बीमारी का प्रकोप कम हो जाता है।
- कापर ऑक्सीक्लोराइड 50% डब्लू पी या मैनकोजैब या कार्बेन्डाजीम 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में 12–14 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।
- फफूंदनशी का प्रयोग चिपकने वाला पदार्थ (स्टिकर) मिला कर ही करें।

4. इरिस पीला धब्बा रोग

ये रोग थ्रिप्स के द्वारा रस चूसने पर फैलता है। इस रोग की उग्रता की मात्रा खेत में थ्रिप्स की संख्या के साथ समानुपातिक हैं। अर्थात, अधिक थ्रिप्स होने पर अधिक रोग दिखाई देता है। इस रोग के लक्षण पहले सुखी घास के रंग के समान, शुष्क, धूप में झुलसे हुए किसी तन्तु या हीरे के आकार के पत्तियों पर दिखाई देते हैं। यह रोग पूरी फसल को नष्ट करने में सक्षम है।

रोकथाम

- इस रोग से प्रभावित पौधे को खेत से निकालकर नष्ट कर दें जिससे कि रोग खेत में न फैले।
- खेत के चारों तरफ मेड़ से खरपतवार को नष्ट कर दें।
- यह रोग थ्रिप्स कीट के द्वारा रस चूसने से फैलता हैं अतः डाईमिथोएट 30% ई सी 300 मि. ली. प्रति एकड़ का प्रयोग करें जिससे रोग फैलाने वाले कीट को रोका जा सके।

5. प्याज का पीला बौना (येलो ड्वार्फ) रोग

यह रोग लहसुन एवं प्याज का मुख्य रोग है। जो कंद उत्पादन को भारी नुकसान पहुंचाता है। यह रोग माहू के रस चूसने से फैलता है। इसके प्रभाव से पौधे का रंग चमकदार पीला पड़ जाता है और पौधे एवं कंद का विकास रुक जाता है।

रोकथाम

- स्वस्थ बीज का ही प्रयोग करे।
- बीमारी से ग्रसित पौधे को खेत से निकालकर नष्ट कर देना चाहिए।
- रोग को फैलाने वाले कीट (माहु) की रोकथाम के लिए नीम प्रकृतिक कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिए।
- माहू की संख्या को खेत में कम करने के लिए पीले चिपचिपे प्रपंच (yellow sticky trap) का प्रयोग करे।
- ज्यादा संख्या होने पर कीटनाशी एसीफेट 75% एस पी का 300 मि ली/एकड़ की दर से प्रयोग करें।

6. मृदुरोमिल आसिता रोग

यह रोग शुरुआत में पत्तियों से फैलता है और पूरा पौधा संक्रमित हो जाता है। इस रोग के लक्षण पत्तीयों पर बैंगनी रंग की फफूंद के रूप में दिखते हैं जो बाद में पीले गहरे रंग के हो जाते हैं तथा पत्तीयाँ एवं बीज के डंठल सुखकर नष्ट हो जाते हैं। लाल प्याज कुछ हद तक इस रोग के प्रति रोधक है।

रोकथाम

- जो लहसुन/प्याज के कंद बीज की फसल के लिए प्रयोग करें उन्हें 10–12 दिनों तक धूप में रखे जिससे फफूंद खत्म हो जाऐं।
- खाद का प्रयोग संतुलित मात्रा में करे और निरंतर सही समय पर सिंचाई करते रहें।
- इस रोग की रोकथाम के लिए जीनेब 0.2 प्रतिशत या केराथेन 0.1 प्रतिशत घोल इस फफूंद को नियंत्रित करने के लिए अच्छा होता है।

7. सफेद फफूंद रोग

इस रोग के प्रकोप होने पर पत्तियों के सिरे पीले पड़ने लगते हैं और पत्तियाँ सुख जाती हैं। शल्क कंद तथा जड़ सड़ने लगती हैं और कंद मुलायम हो जाता है। सफेद फूलमय या कपास के समान गहरे काले स्क्लोरेशिया के साथ संक्रमण कंद पर देखाई देता है।

रोकथाम

- बुवाई के समय ट्राइकोडर्मा विरिडी का प्रयोग खेत में करे।
- बीज को थिरम 2 ग्राम प्रति किग्रा बीज कि दर से उपचारीत कर के ही बोए।
- जमीन को कार्बेन्डाजीम, थिओफिनेट मिथाइल या बेनोमील (0.1%) से उपचरित करने से इस रोग का नियंत्रित होता हैं।

खेत तथा गोदाम में होने वाले रोग :

1. आधार विगलन रोग

इस रोग के शुरुआती लक्षण पत्तियों में पीलापन पौधे की वृद्धि में कमी और बाद में पत्तीयाँ सूखने लगती हैं तथा नीचे की तरफ मुड़ जाती है। शुरुआती अवस्था में पौधे की जड़ गुलाबी पड़ जाती है और सूखने लगती है। फसल के अंत में कंद सड़ना शुरू हो जाता है और पौधा पूरी तरह मर जाता है। जुलाई से अगस्त के महीने में जब तापमान 35–40^{0}C होता है तो ये रोग भंडारण में भी दिखाई देता है।

रोकथाम

- यह रोग भूमि जनित रोग है तो नियंत्रित करना थोड़ा मुश्किल होता है। मिश्रित खेती तथा फसल चक्र इस रोग को कम करता है।
- मिट्टी सौरीकरण (Soil Solarization) : नर्सरी बेड को बुवाई से 30 दिन पूर्व 250 गेज की बिना छेद वाले पोलिथीन से ढक दें एवं पोलिथीन के किनारे पर मिट्टी चढ़ा दें। यह नर्सरी के सूत्रकृमि, कवक, भूमि के कीट नियंत्रण के अति उत्तम तरीका है। इस से फोस्फोरस की आपूर्ति भी आसानी से होती है।
- बीज को थिरम या केप्टान 2 ग्राम/किग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।

2. नेक रॉट

यह रोग कन्द की गर्दन के चारों और मुलायम शल्क के रूप में दिखाई देता है और कभी कभी ज्यादा प्रकोप होने पर घाव भी हो जाते हैं। एक निश्चित किनारा/घेरा रोग ग्रसित तथा रोग रहित शल्क को अलग अलग बांटता है। संक्रमित कन्द भूरे से धूसर रंग का होता है। जब ये धूसर रंग की फफूंद देखाई देने से पहले कन्द की ऊपरी शल्क हटा देनी चाहिए।

रोकथाम

- रोग के फैलने का मुख्यः कारण कन्द का रसीला भाग होता है अतः पौधे का ऊपरी भाग तब काटे जब वो पूरी तरह सुख जाए।
- समान्यतः लाल रंग की किस्में सफेद किस्मों के मुकाबले अधिक प्रतिरोधी होती है।
- खेत में मध्य जुलाई के बाद नत्रजन खाद न डालें।
- फसल कटाई कुछ दिन पहले सिचाई बंद कर दे

जिससे पौधे के जमीन से ऊपर का भाग सुख जाए।

- कटाई से पहले उपर के भाग को अच्छी तरह सूखने दे।
- अनुचित ढंग से उपचारित कन्द का भंडारण न करें।

3. भूरी सड़न

प्याज के बीच वाले हिस्से (शल्ककन्द) में गहरे भूरे रंग का धब्बा इस रोग का मुख्य लक्षण है। शल्क कंद गहरा भूरा होकर सड़ने लगता है। सड़न अंदर से शुरू होकर पूरे कंद मे फेल जाती है। कभी कभी पूरा कंद सड़ने लगता है और भंडारण मे बुरी गंद फैल जाती है।

रोकथामः

- प्याज के रोगी कंद हो भंडारण से पहले छाँटकर बाहर निकाल दें।
- प्याज की फसल में बुवाई से लेकर कटाई तक हल्की सिचाई करें।
- कंद की गर्दन लगभग 25–30 से मी उपर से काटने पर जीवाण्विक संक्रामण कम होता है।
- फसल कटाई के एक महीने पहले आइसोप्रोपाइल फिनाइल कार्बामैट 20 मि ली प्रति लीटर की दर से खेत में छिड़काव करें।

प्याज एवं लहसुन के उन्नत भंडारण विधि

किसानों को चाहिए कि जब फसल तैयार हो जाए तो उस से तकरीबन 20–30 दिनों पहले से खेत में पानी न दें। इस से जमीन एकदम सुख जाएगी और प्याज में नमी नही रहेगी। उस के बाद प्याज खेत से खोदें। जिस से प्याज ज्यादा दिनों तक सुरक्षित रहेगी।

निम्नलिखित कुछ विधियाँ प्याज और लहसुन के लंबे भंडारण में सहायता करेगी :

- जब प्याज खेत में पूरी तरह सुख जाए तो उसके बाद कुछ दिनों तक भंडारण से बाहर सुरक्षित रखें जिससे प्याज में उपलब्ध अधिक मात्रा में नमी बाहर निकाल जाए।
- प्याज तथा लहसुन को अंधकार, ठंडे और अच्छी वायु संचार के साथ सुखी जगह भंडारण करना चाहिए तथा सीधी धूप लगने से बचाना चाहिए।
- प्याज को 40–60 प्रतिशत तथा लहसुन को 65–70 प्रतिशत आर्द्रता पर ही भंडारित करें।
- प्याज को प्लास्टिक के बोरे में रखकर भंडारण में न रखें क्योंकि कम वायु संचार के कारण इसकी भंडारण आयु घट जाती है।
- कभी भी इनको आलू के साथ भंडारण में न रखें क्योंकि आलू से नमी निकलती है जो प्याज को खराब कर सकती है।
- कटे हुए, चुटीले, और रोगी कंद को भंडार में नही रखना चाहिए तथा खराब कंद को फेंक दें।

मध्य व पछेती फूलगोभी से अधिक आय के लिए उन्नत शस्य क्रियाए

श्रवण सिंह, बी.बी. शर्मा एवं बी. आर. परिहार
शाकीय विज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.पं.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–12

फूलगोभी जाड़े के मौसम में उगायी जाने वाली एक प्रमुख सब्जी फसल है। फूलगोभी विभिन्न पोषक तत्वों (पोटेशियम, सोडियम, कैल्शियम, फॉस्फोरस आदि) और जैव–सक्रिय पदार्थो (ग्लूकोसिनोलेट्स) की एक प्रमुख स्रोत है। कुछ ग्लूकोसिनोलेट्स कैंसर से बचाने में सहायक हैं। भारत में इसकी खेती 452 हजार हेक्टेयर क्षेत्रफल में की जाती हैं और उत्पादन 8499 हजार मीट्रिक टन हैं। आजकल मध्य–पछेती फूलगोभी की रोपाई और पछेती गोभी की बुवाई का समय है। इन समूहों की पैदावार अधिक होने से किसानों को अच्छी आमदनी मिलती है। कम फसल अवधि और मौजूदा फसल प्रणाली में उत्तम समावेश होने के कारण फूलगोभी की लोकप्रियता किसानों में निरंतर बढ़ती जा रही हैं।

फूल बनने के लिए तापमान की आवश्यकता और परिपक्वता के आधार पर फूलगोभी के चार वर्ग बनाये गए हैं। इनमें अगेती समूह की फूलगोभी सितम्बर–अक्टूबर में, मध्य–अगेती समूह की किस्में मध्य नवम्बर से मध्य दिसम्बर, मध्य–पछेती समूह की फूलगोभी मध्य दिसम्बर से मध्य जनवरी तथा पछेती समूह की किस्में जनवरी से मार्च तक तैयार होती है। फूलगोभी की किस्मों का चुनाव सोच समझकर करना चाहिए क्योंकि अगेती किस्मों को पछेती लगाने से बटनिंग (बहुत छोटे फूल बनना) की समस्या और विपरीत स्थिति में फूल देरी से बनते हैं। इसके अलावा किस्मों और तापमान में असांमजस्य के कारण फूलों में विकार हो जाते हैं।

मध्य और पछेती समूह की फूलगोभी की उन्नत किस्में:

मध्य–अगेती समूह

पूसा भारद: अर्ध सीधी, मध्यम संकरी, गहरे रंग की पत्तियां, मध्य शिरा मजबूत, पौधे मझोले आकार के, फूल सफेद, ठोस, दानेदार व मध्यम आकार के (700–800 ग्राम)। प्रति हेक्टेयर पैदावार 22.0–26.0 टन होती है। यह नवम्बर के द्वितीय पखवाड़ें में कटाई के लिए तैयार होती है।

पूसा हाइब्रिड–2 : हल्की नीली हरी अर्ध सीधी पत्तियां, फूल क्रीम जैसे सफेद, ठोस एवं मध्यम आकार के (800–900 ग्राम)। प्रति हेक्टेयर पैदावार 25.0–28.0 टन होती है। यह मृदुल आसिता (डाउनी मिल्डयू) से प्रतिरोधी है। यह दिसम्बर के प्रथम पखवाड़ें में कटाई के लिए तैयार होती है।

पूसा पौषजा : पौधे मध्यम आकार के, पत्तियां अर्ध सीधी नीलापन युक्त रंग की, फूल ठोस, सफेद 850–950 ग्राम के होते हैं। इसकी पैदावार लगभग 30.0–32.0 प्रति हेक्टेयर है। यह दिसम्बर के द्वितीय पखवाड़ें में कटाई के लिए तैयार होती है।

पूसा शुक्ति : गहरी हरी पत्तियां, पौधे आकार में मध्यम से बड़ें, सीधे, फूल सफेद, ठोस, वजन में 900–1000 ग्राम और पैदावार 30.0–35.0 टन/हेक्टेयर है। यह दिसम्बर के अंतिम सप्ताह से जनवरी के प्रथम सप्ताह में कटाई के लिए तैयार होती है।

पछेती या स्नोबॉल समूहः

पूसा स्नोबॉल–1: पत्तियां सीधी, चौड़ी, दीर्घ वृतज आकार में, फूल को आर्वत किए हुए, हल्की हरी रंग की होती है। फूल ठोस, बड़े आकार (750–900 ग्राम) के महीन बनावट वाले होते हैं। इसकी पैदावार 22.0–25.0 टन/हेक्टेयर व परिपक्वता का समय फरवरी माह में होती है।

पूसा स्नोबॉल के–1: फूल दूधिया सफेद, बहुत ठोस, पत्तियां चौड़ी और हल्की हरी होती है। फूलों का औसत वजन 800–900 ग्राम होता है। पैदावार 25.0–30.0 टन/हेक्टेयर होती है। यह फरवरी माह में पूसा स्नोबॉल–1 से एक सप्ताह बाद में कटाई के लिए तैयार होती है।

पूसा स्नोबॉल के.टी.–25: पत्तियां हल्की हरी, आकार में मध्यम से बड़ी, फूल बहुत ठोस, दुधियां सफेद और मध्यम आकार के, औसत वनज 900–1000 ग्राम के होते है। पैदावार 30.0–32.0 टन/हेक्टेयर होती है। यह फरवरी माह में कटाई के लिए तैयार होती है।

पूसा स्नोबॉल हाईब्रिड–1: पछेती समूह की एकमात्र संकर किस्म है। जिसे नर बंध्यता के उपयोग से तैयार की गई है। इसके पौधे आकार में मध्यम से बड़े, पत्तियां गहरी हरी तथा फूल अत्यधिक ठोस व सफेद होते हैं। फूलों को औसत वजन 900–1100 ग्राम तथा पैदावार 35.0–40.0 टन/हेक्टेयर होती है। इसकी परिपक्वता फरवरी से मध्य मार्च तक होती है।

बीज और पौधशाला प्रबंधन:

मध्य और पछेती समूह की फूलगोभी की नर्सरी उगाने के लिए अधिक वर्षा और बिमारियों से विशेष देखभाल करने की आवश्यकता होती है।

- मध्य और पछेती फूलगोभी के लिए 400–500 ग्राम बीज से तैयार की गई पौध एक हेक्टेयर क्षेत्रफल में रोपाई हेतु पर्याप्त होती है।
- फूलगोभी की पौधशाला की जगह का चुनाव करते समय उचित जलनिकास की व्यवस्था करें। संभव हो तो मृदा जनित बीमारियों से प्रभावित भूमि में पौधशाला न बनायें। पानी के स्रोत के नजदीक ही जगह का चुनाव करें।
- चयनित भूमि को बुवाई से एक सप्ताह पहले बाविस्टिन या केप्टान के 3 ग्रा./ली. पानी के घोल से तर करें। इससे आर्द्रगलन की समस्या कम आती है।
- बुवाई के एक सप्ताह पहले 1 किग्रा. *ट्राइकोडर्मा वीरीडी* को 100 किग्रा. गोबर की खाद में मिला कर तैयार करें और बुवाई से पहले इसे नर्सरी बैड में मिलायें। इससे भी आर्द्रपतन और मृदा जनित रोगों से बचाव होता है।
- पौध तैयारी के लिए बैड 3.0–5.0 मी. लम्बाई में, 45 सेमी. से 1.0 मी. चौड़ाई में तथा 20–30 सेंमी. उठी हुई बनायें। एक हेक्टेयर क्षेत्रफल में रोपाई के लिए लगभग 25 से 30 नर्सरी बैड पर्याप्त होती हैं।
- नर्सरी तैयारी के समय प्रत्येक बैड़ में 20–25 किग्रा. अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद मिलायें।
- बुवाई से पहले बीज उपचार अवश्य करें। इसके लिए केप्टान या बाविस्टीन 2 ग्रा. प्रति किग्रा. बीज की दर से या ट्राईकोड्रमा 5 ग्रा. पाउडर को 15–20 मी.ली. पानी में लेप बनाकर प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से बीज उपचार करें।
- नर्सरी में बुवाई 1.5 सेमी. गहरी 5 से 7 सेंमी. की दूरी पर बनी पंक्तियों में करें। बुवाई के बाद नर्सरी बैड को सुखी घास से ढ़के और 4 दिन बाद अंकुरण होने पर हटायें। प्रतिदिन सुबह और सांयकाल में झारे से पानी दे। साप्ताहिक अंतराल पर पंक्तियों के मध्य गुड़ाई करें और खरपतवार निकाले।
- मध्य पछेती समूह की किस्मों के लिए अक्टूबर माह में और पछेती समूह की किस्मों के लिए नवम्बर माह में रोपाई करें।
- मध्य और पछेती समूह की फूलगोभी की पौध 3 से 4 सप्ताह में रोपाई के लिए तैयार हो जाती है। पौध को सख्त बनाने (हार्डनिंग) के लिए रोपाई से 5–6 दिन पहले नर्सरी में सिंचाई एक दिन के अंतराल पर करें। खेत में अच्छे जमाव हेतु फूलगोभी की रोपाई सांयकाल में ही करें।
- रोपाई से पहले पौधों की जड़ों को ट्राइकोडर्मा 10 ग्रा. प्रति लीटर पानी के घोल में 30 मिनट तक डुबायें ताकि रोपाई के बाद आने वाले जड़ गलन रोग से बचाव किया जा सके।

उन्नत शस्य क्रियाएं

- फूलगोभी को अधिक खाद और उर्वरकों की आवश्यकता पड़ती है। भूमि की जांच करवायें और उर्वरकों की मात्रा का निर्धारण करें, औसतन प्रति हेक्टेयर सड़ी हुई

गोबर की खाद या कम्पोस्ट 25 से 30 टन, नत्रजन 120 किग्रा., फॉस्फोरस 100 किग्रा. और पोटाश 60 किग्रा. की दर से दें।

- गोबर की खाद या कम्पोस्ट की पूरी मात्रा खेत की तैयारी के समय रोपाई के तीन सप्ताह पूर्व की जाने वाली प्रथम जुताई के दौरान भूमि में मिला दें।
- खेत की अंतिम जुताई के समय नत्रजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा भूमि में अच्छी तरह से मिला दें।
- शेष नत्रजन को बराबर दो हिस्सो में बांट कर रोपाई के 30 दिन और 45 दिन बाद निराई–गुड़ाई और मिट्टी चढ़ाते समय मिलाएं।
- पौधों की बढ़वार कम होने की स्थिति में 10–15 ग्राम यूरिया प्रति लीटर पानी के घोल को रोपाई के 15 दिन बाद 10 दिन के अंतराल पर दो बार छिड़काव करें।
- गोभी में बोरोन की कमी के कारण के फूलों में भूरापन तथा मोलिब्डेनम की कमी के कारण व्हीपटेल (संकरी व पतली चाबूकनुमा पत्तियां) की समस्या आती हैं। इनसे बचाव के लिए 10 से 15 किग्रा. बोरेक्स और 1.0 से 2.0 किग्रा. सोडियम या अमोनियम मोलिबडेट प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में मिलायें। साथ ही 2 से 3 बार 0.3 प्रतिशत बोरेक्स का फूल बनने तक छिड़काव करें।
- मध्य और पछेती समूह की फूलगोभी की रोपाई उठी हुई मेड़ियों (15–20 सेंमी.) पर करने से खेत में जमाव वर्षा से पौधों का नुकसान नहीं होता हैं और फसल की पैदावार अच्छी होती हैं।
- मध्य व पछेती समूह की फूलगोभी के पौधे आकार में मघ्यम से बड़े आकार के होते हैं इसलिए फसल पौधों की बीच दूरी अधिक रखें।
- अगेती फूलगोभी के लिए फसल पंक्तियों के बीच 60 सेंमी. एवं पौधों से पौधों के बीच 45 सेंमी. रखें। रोपाई के तुरन्त बाद हल्की सिचांई करें।
- रोपाई उपरांत कुछ पौधे मर जाते हैं या जिन पौधों की कोपल क्षतिग्रस्त (ब्लांइडिंग) हो जाती है वहां पुनः रोपण (गेप फिंलिंग) करें। इसके लिए पौधशाला में कुछ पौधे बचा कर रखें।
- फूल गोभी में शुरुआती चार सप्ताह तक खरपतवारों का नियंत्रण अवश्य करें अन्यथा 35 से 70 प्रतिशत तक पैदावार में नुकसान होता है। इनके नियन्त्रण के लिए रोपाई से एक–दो दिन पहले खेत में स्टॉम्प 3.3 लीटर या बेसालीन 2.5 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव कर हल्की सिंचाई करें। साथ ही 15 दिन के अंतराल पर 3 गुड़ाई करें।
- गोभी की जड़ें उथली होती है इसलिए रोपाई के 30 दिन और 45 दिन बाद हल्की गुड़ाई करें और मिट्टी चढ़ायें जिससे फसल की बढ़वार अच्छी होती है एवं पैदावार बढ़ती है।
- रोपाई के तुरन्त बाद् फसल में सिंचाई करें। इसके पश्चात 5 से 8 दिन के अन्तराल पर सिचांई करें। पौधों की बढ़वार और फूल बनने की अवस्थाओं में भूमि में प्र्याप्त नमी बनायें रखें।

कटाई और विपणन

गोभी के फूल प्रजाति के अनुसार उचित आकार के होने पर ठोस अवस्था के रहते ही काट लेने चाहिए। कटाई में देरी से फूल ढ़ीले हो जाते हैं जिनका बाजार भाव बहुत कम मिलता है। गोभी के फूलों को ठूंठ के साथ चाकू, हसिया या खुरपी से काटें क्योंकि यह और बाहरी पत्तियां परिवहन के दौरान फूलों को सुरक्षित रखती है। कटाई उपरांत फूलों को बाजार के लिए तैयार करते समय फूल के बाहर वाले बड़े पत्तों को ही हटाएं। इससे फूलों की गुणवत्ता बनी रहेगी।

- सभी फूल एक साथ तैयार नहीं होते है अतः 2–4 दिन के अंतराल पर कटाई करें। कटाई के बाद फूलों को रंग, सुगठता व आकार के आधार पर श्रेणीकृत करें।
- मध्य और पछेती समूह की पैदावार अधिक होती है इसलिए किसान इसकी खेती से अच्छी आमदनी ले सकते हैं।
- औसतन 25–30 टन प्रति हेक्टेयर पैदावार इस फसल से हो जाती है।
- फूलगोभी की खेती करके किसान औसतन 65,000 से 75,000 रुपये प्रति हेक्टेयर मात्र तीन महीने में उचित

फसल प्रबंधन और उचित बाजार भाव मिलने पर कमा सकते हैं।

प्रमुख रोग एवं कीट प्रबन्धन

- मध्य समूह की फूलगोभी में कीड़ों का प्रकोप अगेती व पछेती समूह की फसल से कम होता है लेकिन मृदुल आसिता और काला सड़न बीमारियों की समस्या अधिक होती है।
- पछेती समूह में मुख्य गोभी की इल्ली, हीरक पृष्ठ पंतगा कीट (डी.बी.एम.), कैबेज एफिड (माहू/चेपा), पातगोभी तितली और तंबाकू सूण्डी आदि है।
- समय समय पर कीड़ों और रोगों से ग्रसित पत्तियों को निकाल कर गड्डे में दबायें। गोभी में ज्यादातर मादा कीट अण्डे पत्तों की निचली सतह पर समूह में देते हैं। इन पत्तों तोड़ें और सुण्डियों से ग्रसित पत्तों को एकत्र कर गड्डे में दबायें।
- गोभी की इल्ली पौधों को रात्रिकाल में नुकसान पहुंचाती है। इसके नियंत्रण हेतु प्रकाश प्रपंच का प्रयोग व्यक्स शलभों को पकड़ने के लिए करें।
- हीरक पृष्ठ पतंगा कीट गोभी में 50–60% तक नुकसान पहुंचाता है जो पत्तियों की निचली सहत पर छोटे–छोटे छिद्र बना देती है। इसके नियंत्रण हेतु गोभी की प्रत्येक 25 कतारों के बाद दो कतार जाल फसल (ट्रेप क्रॉप) सरसों की लगावें। इसके लिए सरसों की एक पंक्ति गोभी की रोपाई से 15 दिन पूर्व और दूसरी पंक्ति रोपाई के 25 दिन बाद बुवाई करे। गोभी में स्पाइनोसिड (25 एस.सी.) 3.0 मिली. प्रति 10 लीटर पानी या इण्डोक्सीकार्ब 14.5 एस.सी. 75 ग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।
- तंबाकु की सुण्डी छोटी अवस्था में पत्तों को खुरच कर खाती है तथा बड़ी अवस्था में गोल–गोल काट कर खाती है। इसके नियंत्रण हेतु अण्डों के समूह को एकत्र कर नष्ट करें। एन.पी.वी. 250 एम.ई./है. की दर से छिड़काव करें एवं मेलाथियान 2.0 मि.ली./ली. के हिसाब से पानी में मिलाकर छिड़काव करें। कैबेज एफिड की रोकथाम के लिए डाईमेथोएट 30 ई.सी. 2.0 मि.ली. प्रति लिटर छिड़कें। नीम के सत 5 प्रतिशत और नीम बीज के सत 5 प्रतिशत का छिड़काव 10 से 15 दिन के अंतराल पर करें।
- आर्द्रपतन रोग का प्रकोप नर्सरी अवस्था में अत्यधिक होता है। इसके नियंत्रण हेतु बीजों को थीरम या केप्टान 2 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। आवश्यकतानुसार इन कवकनाशियों का 2 ग्राम प्रति लीटर का छिड़काव भी करें।
- मृदुल आसिता में पत्तियों की निचली सतह पर सफेद चूर्णयुक्त धब्बे बनते हैं जो उपरी सतह पर पीले रंग के होते हैं। इसके नियंत्रण हेतु रिडोमिल एम.जेड. 0.25 ग्राम या इन्डोफिल एम.–45 3.0 ग्राम प्रति लीटर का छिड़काव करें।
- काला सड़न के कारण पत्तियों के बाहरी किनारों पर षष्ट आकार के हरिमाहीन एवं पानी में भीगे जैसे धब्बे दिखाई देते है जो बाद में पीले पड़ जाते हैं। इसके नियंत्रण हेतु स्वस्थ्य बीज लें और बीजों को स्टेप्टोसाइक्लिन 250 मि.ग्रा. प्रति ली. पानी के घोल में 2 घंटे भिगो कर छायादार जगह में थोड़ी देर सुखाकर बुवाई करें। इसके साथ स्ट्रप्टोसाइक्लिन 40 ग्राम और कोपर ऑक्सीक्लोराइड 200 ग्राम को 200 लीटर पानी में मिलाकर 7 से 10 दिन के अंतराल पर छिड़कें।
- अल्टरनेरिया धब्बा रोग से पत्तियों पर गोल आकार के छोटे से बड़े भूरे वलयाकार धब्बे बनते है जो बाद में काले पड़ जाते हैं। इसके नियंत्रण हेतु मेंकोजेब 75 डब्लयू.पी. 2 ग्रा. प्रति लीटर पानी में मिलाकर 2–3 बार छिड़काव करें।

भारत के बहुतायत लघु किसानों को एकत्रित करने की जरूरत एवं रणनीतियां

विनायक निकम एवं अबिमन्यु झाझड़िया
भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय कृषि आर्थिकी एवम् नीति अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

भारत की आबादी का करीब 70 फीसदी हिस्सा गांवों में रहता है, जहां 52 फीसदी लोग कृषि क्षेत्र में कार्यरत हैं। भारत में कुल 82 फीसदी लघु और सीमांत भूमि वाले किसान हैं जिनके पास देश के खेती योग्य क्षेत्र लगभग 44 फीसदी है। कृषि जनगणना के आंकड़े बताते हैं कि वर्ष 2000–01 में भारत में लगभग 121 मिलियन कृषि जोतें थी, जिनमें से लगभग 99 मिलियन छोटे और सीमांत किसान थे। वर्ष 2000–01 में औसत आकार 1.37 हेक्टेयर घट गया है जो की वर्ष 1970–71 में 2.3 हेक्टेयर था। इससे पता चलता है कि दिनों दिन छोटे और सीमांत किसानों की संख्या बढ़ रही है। इसलिए, सतत कृषि विकास और खाद्य सुरक्षा के लिए एवं राष्ट्र के आर्थिक विकास के लिए समाज के इस विशाल तबके का विकास आवश्यक है।

लघु और सीमांत किसानों को उनकी छोटी जोत के कारण कुछ फायदे और नुकसान भी मिलते हैं। अगर फायदे की बात करें तो यह भारतीय विविधता के अनुरूप है और आनुवांशिक क्षरण की रोकथाम के द्वारा जैव विविधता के संरक्षण में मदद करता है। लिपटन (2006) ने विकास और गरीबी कम करने में छोटे खेतों की भूमिका को अहम माना है। बिरथल (2011) ने दिखाया कि इन लघु किसानों का खेती योग्य भूमि के 44 प्रतिशत हिस्सा है, पर वे देश में 70 प्रतिशत सब्जी उत्पादन, 55 प्रतिशत फल उत्पादन और 69 प्रतिशत दूध उत्पादन में योगदान करते हैं। अधिकांश अध्ययनों ने पाया है कि उनकी उत्पादकता बड़े किसानों की तुलना में अधिक है। छोटे और सीमांत किसानों के कई फसलों का एकाधिक फसलें सूचकांक अधिक होता है और उनके पास 51 प्रतिशत सिंचाई की पहुंच होती है जो की बड़े किसानों के लिए 31 प्रतिशत है।

लघु जोतों से जुड़ी बड़ी सारी चिंताएं हैं। हालांकि उनकी उत्पादकता अधिक है, शोधकर्ताओं ने इनके दीर्घकाल में आर्थिक सक्षमता पर सवाल उठाये हैं। अधिकांश किसान अपना खर्चा और कर्ज को चुकाने में विफल होते हैं जिसके परिणामस्वरूप ऋणग्रस्तता आती है। लघु क्षेत्र के कारण बड़े पैमाने में मिलने वाले फायदे उनको नहीं मिलता जिसके परिणामस्वरूप उनके पास सौदेबाजी की कम शक्ति होती है। सीमित आय उनकी पूंजी को फिर से कृषि में निवेश को प्रतिबंधित करती है। समाज के इस खंड में ज्यादातर असंगठित लोग हैं, इसलिए उनकी बाजार पहुँच कम है और उनके बाजार संबंध भी कम रहते हैं। यद्यपि यह खंड संख्याओं में बढ़ रहा है, सामाजिक और विकास संकेतक पर वे मुख्यधारा के बहुत पीछे हैं। इसलिए नई रणनीति की आवश्यकता है जो उन्हें स्थायी रूप से उत्थान करने में मदद कर सके।

इसके लिए हमें विकास के ऐसे स्वरूप की जरूरत है जो की किसानों के नेतृत्व में बनी है, विकेन्द्रीकृत है, क्षेत्र और स्थान विशिष्ट है और जहां पर निजी एवं गैर–सरकारी संगठनों की भागीदारी है। इन लघु किसानों को जुटाने और संगठित करने की आवश्यकता है जिससे उनकी संसाधनों की बाधाओं को दूर किया जा सकता है और वे बड़े पैमाने की अर्थव्यवस्था एवं अधिक सौदेबाजी की शक्ति प्राप्त कर सकते हैं। हरल्हे (2012) ने अपने लेख ''लिंकिंग स्मॉलहॉल्डर फार्मर टू मार्केटः द पावर ऑफ फार्मर बेस्ड ऑर्गेनाइजेशन'' मे बल दिया कि जब किसान सहकारी समितियों या सदस्य–स्वामित्व वाले व्यवसायों के माध्यम से एकजुट हो जाते हैं, तो वे अपने संसाधनों को पूल कर सकते हैं और जो भी काम करते हैं, उससे अधिकतम मूल्य प्राप्त कर सकते हैं। कुछ महत्वपूर्ण रणनीतियों जिसके माध्यम से इन छोटे और सीमांत किसानों को जुटाया जा सकता है और संगठित किया जा सकता है वे इस प्रकार हैः

किसान उत्पादक संगठन (एफपीओ)

किसान आधारित संगठनों में शामिल होने से लघु किसानों को उनके उत्पादन, प्रसंस्करण और विपणन गतिविधियों के लिए इनपुट, क्रेडिट और बाजार की जानकारी आसानी से प्राप्त हो सकती है। ज्यादातर किसानों के संगठन अपनी खपत के लिए केवल उत्पादन के मुकाबले बाजार के लिए उत्पादन या फसल पर अधिक ध्यान देते हैं जो की लघु किसानों के कल्याण को बेहतर बनाने के लिए अच्छा है। किसान उत्पादक संगठन के साथ जुड़कर किसान निम्न फायदे प्राप्त कर सकते हैं:

1) किसान अपने कृषि साधनों को संग्रह करके, अपनी मोल–भाव की शक्ति को मजबूत कर सकते हैं।
2) किसान अपने कृषि साधनों को संग्रह करके, किसान खेती गतिविधियों से जुड़े जोखिम को कम कर सकते हैं।
3) अपने कृषि साधनों को संग्रह करके, किसान बाजार में विपरण की विभिन्न प्रणालियों तक पहुंच सकते हैं।
4) अपने कृषि साधनो को संग्रह करके, किसान अर्थव्यवस्था के स्तर में सुधार से लाभान्वित हो सकते हैं।
5) किसान अपने कृषि साधनो को संग्रह करके, निवेश के साथ जुड़ी औसत तय लागत और लेनदेन की लागत को कम करने में सक्षम हो जाते हैं।

एक विश्व बैंक के अध्ययन से पता चलता है कि किसानों की किसी एसोसिएशन के माध्यम से भागीदारी से उन्हें बड़े पैमाने की अर्थव्यवस्था बढ़ाने, उत्पादकता बढ़ाने, उत्पादक सामाग्री आपूर्ति और गुणवत्ता नियंत्रण में सहायता में लाभ मिलता है।

अनुबंध खेती

यह बाजार में तीन महत्वपूर्ण खिलाड़ियों किसान, निजी कंपनी या कंपनी और उपभोक्ता के ऊर्ध्वाधर एकीकरण की प्रक्रिया है। यह लघु एवं सीमांत किसानों के श्रम और प्रभावकारिता, निजी कंपनियों के प्रबंधन कौशल एवं पूंजी और उपभोक्ताओं की पसंद एवं विकल्पों को जोड़ती है, जो की तीनों के लिए फायदेमंद है। यह कृषि उत्पादों का किसानों को निर्धारित बाजार मूल्य प्रदान करके उत्पादक सामाग्री, प्रौद्योगिकी, सलाहकार और जोखिम प्रबंधन में मदद कर सकते हैं इसलिए समुचित स्तर पर लघु एवं सीमांत किसानों को जुटाने और उन्हें संगठित करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। यह आपूर्ति श्रृंखला और मूल्य श्रृंखला को सुधारता है और फसल जोखिमों को कम कर देता है, इस तरह से लघु एवं सीमांत किसानों को अधिक आय देने में मदद करता है। विशेषज्ञों ने अनुबंध खेती को कृषि क्षेत्र में निजी क्षेत्र के निवेश को बढ़ाने को एक अवसर के रूप में भी देखा है।

सहकारी समितिया

जमीनी स्तर पर सहकारी समिति विभिन्न आर्थिक और सामाजिक गतिविधियों में लगे असुरक्षित और असंगठित लोगों को संगठित करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। सहकारी आंदोलनों ने साहूकारों से लोगों के शोषण को रोकने और विशेष रूप से लघु किसानों, ग्रामीण कारीगरों, भूमिहीन श्रमिकों, निराश्रय महिलाओं आदि की आर्थिक स्थिति को सुधारने में मदद की है। सहकारी समिति के माध्यम से किसान अपने संसाधनों को संगृहित करके अर्थव्यवस्था के स्तर एवं मोल–भाव की शक्ति में सुधार कर सकते हैं। महाराष्ट्र राज्य में, महाग्रेप ने सहकारी समितियों की इस क्षमता का इस्तेमाल करके 15 अंगूर उत्पादक सहकारी सोसायटी को विपणन भागीदार बनाकर एकित्रित किया, जिससे लघुकिसान अंतरराष्ट्रीय बाजार से जुड़ सकें, जो लघु एवं सीमांत किसानों के लिए व्यक्तिगत रूप से संभव नहीं था।

स्वयं सहायता समूह/किसान हित समूह

विभिन्न कृषि जरूरतों को पूरा करने के लिए एसएचजी/एफआईजी के माध्यम से समूह संग्रह और संगठन में लघु किसानों की ताकत देखी गयी है। ऐसा करके वे अपनी बचत एकत्र करके और खपत एवं निवेश दोनों के लिए ऋण के लिए अवसर पैदा कर सकते हैं। कृषि गतिविधियों में उनके प्रमुख योगदान के बावजूद कृषक महिलाओं की विस्तार, पूंजी, सूचना और बाजार तक पहुंच बहुत सीमित है। एसएचजी/एफआईजी का गठन महिलाओं और युवाओं के वित्तीय समावेशन में मदद करेगा, उन्हें सूक्ष्म उद्यमों, कृषि में निवेश करने और उनकी आय एवं जीवन स्तर में सुधार के लिए अधिक पैसा देगा।

नई विपणन प्रणाली

हमे ऐसी नई विपणन प्रणालीकी जरूरत है, जो आपूर्ति श्रृंखला में मध्यस्थ की संख्या को कम करने और आधुनिक सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के उपयोग के साथ किसानों और उपभोक्ताओं के बीच संपर्क को बढ़ाती हो, इससे लघु एवं सीमांत किसानों की आय में वृद्धि करने में मदद हो सकती है। ई–चौपाल जैसी पहल ने संसाधनों के गरीब लघु एवं सीमांत किसानों को बाजार की आसूचना से कीमतों के बारे में सही सूचना देकर अपने उत्पाद को बाजार उच्च मूल्य पर बेचने में मदद की है। आंध्र प्रदेश के रथू बाजार और महाराष्ट्र के शेतकारी बाजार नए विपणन पहल के अन्य उदाहरण हैं जो किसानो को उपभोक्ता से जोड़ते हैं।

भारत सरकार ने ई–राष्ट्रीय कृषि बाजार (ई–नाम) नामक एक नई पहल की शुरुआत की है, जो एक अखिल भारतीय इलेक्ट्रॉनिक ट्रेडिंग पोर्टल है जो कि मौजूदा एपीएमसी मंडियों को जोड़ कर कृषि वस्तुओं के लिए एक एकीकृत राष्ट्रीय बाजार का निर्माण करेगा। यह ऑनलाइन ट्रेडिंग प्लेटफॉर्म के माध्यम से एक एकीकृत बाजार का निर्माण करेगा, एकीकृत बाजारों में प्रक्रियाओं को व्यवस्थित करेगा, खरीदार और विक्रेता के बीच सूचना असमानता को दूर करेगा और वास्तविक मांग और आपूर्ति के आधार पर वास्तविक मूल्य अन्वेषण की खोज को बढ़ावा देगा। इस पहल की संभावना है कि लघु एवं सीमांत किसानों पर सकारात्मक प्रभाव पड़े, हालांकि वास्तविक प्रभाव का मूल्यांकन करना अभी तक बाकी है।

इस तरह, भारतीय कृषि में लघु एवं सीमांत किसानों की विशाल उपस्थिति को देखते हुए उपरोक्त उपाय, उनकी सामाजिक एवं आर्थिक विकास को बढ़ावा दे सकते हैं।

लेखकों से...

1. अपने तकनीकी एवं लोकप्रिय लेख हिन्दी में टाइप करवाकर भेजें।
2. रचना पृष्ठ के एक ओर उचित हाशिया और पंक्तियों के बीच स्थान छोड़कर सम्पादक, प्रसार दूत के पास यथा समय भेजें।
3. वर्ष 2015 से प्रसार दूत का अंक त्रैमासिक किया गया है। लेखकों से अनुरोध है कि प्रथम अंक के लिए प्रकाशनार्थ सामग्री 30 जनवरी, द्वितीय अंक 30 अप्रैल, तृतीय अंक 31 जुलाई तथा चतुर्थ अंक 31 अक्तूबर तक अवश्य भेज दें।
4. तकनीकी पर दी गई जानकारी की पूरी जिम्मेदारी लेखक की होगी। रचना को प्रकाशित करने या न करने का पूरा अधिकार सम्पादक मंडल को होगा।

प्रसार दूत का प्रकाशन समय

प्रथम अंक मार्च, द्वितीय अंक जून, तृतीय अंक सितम्बर और चतुर्थ अंक दिसम्बर में प्रकाशित होगा।

वार्षिक शुल्क 80/- मनीऑर्डर द्वारा भेजें।

शुल्क और सामग्री भेजने एवं पत्रिका मंगवाने का पता

प्रभारी अधिकारी

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

भा.कृ.अ.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

फोन: 011-25841670, 25846233, 25841039, 25803600

पूसा एग्रीकॉम: 1800 11 8989 (नि:शुल्क)

पाठकों से...

प्रसार दूत में प्रकाशित किसी भी तकनीकी के विषय में अंश और समाधान हेतु आपके पत्रों का स्वागत है। विषयों पर अधिक जानकारी के लिए लेखक से सीधे भी सम्पर्क कर सकते हैं।

किसानों से...

यदि आपकी खेती व पशु-पालन संबंधी कोई विशेष समस्या है, तो लिखकर भेजें। हम प्रसार दूत के माध्यम से उसका समाधान आप तक पहुंचाएंगे।

अन्त में ...

आपकी खुशहाली ही हमारी सफलता है।

निदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012 द्वारा प्रकाशित तथा

मैसर्स एम एस प्रिंटर्स, सी-108/1 बैक साइड नारायणा इंडस्ट्रीयल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110028, द्वारा मुद्रित

फोन: 7838075335, 9899355565, 9899355405,